जय अमरनाथ !

[काश्मीर-स्थित अमरनाथ की यात्रा का सचित्र रोचक वर्णन]

●

लेखक

यशपाल जैन

भूमिका

काका सा० कालेलकर

●

१९५५

सस्ता साहित्य-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल,
नई दिल्ली

पहली बार : १९५५
मूल्य
डेढ रुपया

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स,
दिल्ली

प्रकाशकीय

प्राकृतिक सौंदर्य की दृष्टि से हमारा देश बहुत ही समृद्ध है। उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में हिन्दमहासागर तक और पूर्व में बंगाल की खाड़ी से लेकर पश्चिम में अरबसागर तक, सैकड़ों ऐसे स्थल विद्यमान हैं, जिन्हें देखने के लिए देश के कोने-कोने से असंख्य लोग आते हैं। हिमालय के सौंदर्य का तो कहना ही क्या ! उसके दर्शन के लिए तो दुनिया भर के प्रकृति-प्रेमी पर्यटक हजारों मील की यात्रा करके आते हैं।

पाठक जानते हैं कि हिमालय में काश्मीर का अपना स्थान है। उसका सौंदर्य जगद्विख्यात है। वहां के पर्वत, वहां की वनश्री, वहां की झीलें, वहां के प्रपात और वहां का स्वास्थ्यवर्द्धक जलवायु, जाने कहां-कहां से खींच कर यात्रियों को वहां ले आते हैं। उसकी इस अतुलनीय और अनन्त प्राकृतिक सुषमा को देखकर ही किसी प्राचीन कवि ने कहा था कि अगर इस पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है तो वह काश्मीर में है।

विगत सितम्बर में लेखक ने काश्मीर-स्थित अमरनाथ की यात्रा की थी। इस यात्रा का प्रकृति-प्रेमियों के लिए तो महत्त्व है ही, धार्मिक दृष्टि से भी इसकी बड़ी मान्यता है। रास्ते की दुर्गमता तथा भयंकरता की चिन्ता न करके सैकड़ों-हजारों नर-नारी प्रतिवर्ष इस महान तीर्थ की यात्रा करते हैं और अमरनाथ के दर्शन कर जीवन की धन्यता अनुभव करते हैं। प्रकृति-प्रेमियों को तो इतनी सामग्री मिलती है कि अन्यत्र शायद ही मिले। वहां के अद्भुत दृश्यों को देखकर कोई भी सजीव व्यक्ति मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

प्रस्तुत पुस्तक में अमरनाथ की यात्रा का बड़ा ही विशद और रोचक वर्णन है। यात्रियों की सुविधा के लिए इसमें यात्रा-विषयक प्रायः सभी आवश्यक जानकारी दे दी गई है। इसे पढ़कर यात्रा का चित्र आंखों के सामने घूम जाता है। ऐसा प्रतीत होता है, मानो हम स्वयं उस तीर्थ की यात्रा कर रहे हैं।

दो शब्द

अमरनाथ का नाम बहुत दिनो से सुन रखा था, पर साथ ही यह भी पता चला था कि वहा की यात्रा बडी कठिन है और साल के कुछ ही दिनो मे होती है। जब हम श्रीनगर पहुचे और वहा की यात्रा का विचार हुआ तो मैंने सोचा कि अमरनाथ-सबधी जो भी साहित्य उपलब्ध हो, देख लेना चाहिए। सबसे पहले विजिटर्स ब्यूरो पहुचा। वहा डाइरेक्टर महोदय के दफ्तर मे जाकर पूछा तो पता चला कि अमरनाथ पर कोई भी स्वतत्र पुस्तक नही निकली है। उन्होंने दो-तीन फोल्डर दिये, जिनमे से एक मे अमरनाथ का मामूली-सा वर्णन था। भारत सरकार के टूरिस्ट इन्फार्मेशन आफिस गया, वहा भी कुछ न मिला। बडा आश्चर्य हुआ। जिस स्थान की यात्रा के लिए देश के कोने-कोने से हजारो नर-नारी आते है और सैकडो विदेशी पर्यटक जिसे देखकर हैरत मे रह जाते है, उसके बारे मे कोई साहित्य नही!

ब्यूरो से लौटकर बाजार मे चक्कर लगाया। किताबों की सारी दुकाने देख डाली, लेकिन अमरनाथ पर कोई भी स्वतन्त्र पुस्तक न मिली। काश्मीर पर कई पुस्तके हिन्दी-अग्रेजी मे थी, लेकिन उनमे अमरनाथ पर एक छोटा-सा अध्याय था। किसी-किसी मे वह भी नही। किसी अन्य अध्याय के साथ उसका नाममात्र का वर्णन था। एक छोटी-सी पुस्तक अमरनाथ पर हिन्दी मे मिली, लेकिन उसमे अमरनाथ के धार्मिक रूप को अधिक महत्व दिया गया था। वैसे भी वह बहुत पुराना प्रकाशन था। कागज, छपाई आदि सब असतोष-जनक, चित्र केवल एक, वह भी अस्पष्ट! दिल मे बात चुभी।

ब्यूरो मे अधिकारी महोदय से बात हुई थी। अमरनाथ-सम्बन्धी साहित्य के अभाव पर खेद प्रकट करते हुए, जब मैंने उनसे कहा कि मैं उस-पर एक पुस्तक लिखने का विचार कर रहा हू तो उन्हें बडा हर्ष हुआ। उन्होंने कहा "अवश्य लिखिये। हम लोगों को उससे बडा लाभ पहुचेगा।'

नेहरूजी ने अपने काश्मीर-प्रवास की स्मृतियो में लिखा है, "मेरे

कि इन पृष्ठो मे उसका वर्णन उतना सजीव और रोचक हो सका है या नहीं, पर अपनी ओर से मैने प्रयत्न किया है कि जहा तक हो सके, पाठको को हमारे आनन्द का कुछ अश मिल जाय और वे घर-बैठे उस यात्रा की कुछ झाकिया ले लें। उपयोगिता की दृष्टि से पुस्तक मे सभी आवश्यक जानकारिया दे दी गई है। कम पढे-लिखे यात्री इससे लाभ उठा सके, इसलिए इसे मोटे टाइप मे छापा जा रहा है। चित्र भी काफी दिये गए है।

इन चित्रो मे से अधिकाश मेरे स्वय के लिये हुए है। कुछ भाई श्री वि० य० घोरपडे के है और कुछ जम्मू और काश्मीर सरकार के सूचना-विभाग से मिले है। इसके लिए मै इनका बहुत अनुगृहीत हू।

अस्वस्थ होते हुए भी श्रद्धेय काकासाहब ने बहुत ही सुन्दर एव उपयोगी भूमिका लिख देने की कृपा की, तदर्थ मै उनका हृदय से आभारी हूँ।

पुस्तक की तैयारी में मुझे जिन व्यक्तियो तथा पुस्तको से सहायता मिली है, उनका भी मै ऋणी हू। भाई विट्ठलजी, श्री जीतमलजी तथा श्री मार्तण्डजी की प्रेरणा के लिए कुछ कहू तो वह मात्र औपचारिक बात होगी। ये सब मेरे इतने निकट है कि कुछ कह कर मै इनकी नाराजी का पात्र बनूगा।

यदि इस पुस्तक को पढकर पाठको को आनन्द आया और अमरनाथ की यात्रा की प्रेरणा हुई तो मै अपने परिश्रम को सफल समझूगा।

७/८, दरियागज,

दिल्ली।

१ जून १९५५

भव्य और दिव्य

तपस्या और काव्य परस्पर-विरोधी तत्त्व मालूम होते है। सूर्योदय-सूर्यास्त, उपवन और पुष्पवाटिका, आकाश के पक्षी और उनका गान, भव्यता और लालित्य, ये सब जीवन के आनन्द के विषय है। उनका आस्वाद लेने का मौका जब मिलता है, तब हम आनन्दविभोर होते है और एक तरह की सतोषजनक जीवन-समृद्धि का अनुभव भी करते है।

इसके विपरीत जब तपस्या का सकल्प करते है, तब हम उपवास, जागरण आदि देहदडन के प्रकार आजमाते है। इन्द्रियानन्द को भूलकर इन्द्रिय-निग्रह करते है। आखे मूद कर अन्तर्मुख होते है और विश्वभर दौडने वाले मन को एकाग्र करके ध्यानमग्न होते है। जैसे तपस्या बढती है और हम तितिक्षावीर बनते है वैसे हम जीवन-शुद्धि का अनुभव करते है। काव्यानुभव से आनन्द-वृद्धि होती है। तपस्या तपने से सब तरह की शक्ति बढती जाती है।

हमारे भारतीय पूर्वजो ने जीवन-साधना के किसी शुभग क्षण मे जीवन-शुद्धि और जीवन-समृद्धि का समन्वय करने का सोचा और वे पवित्र स्थानो की यात्रा करने निकल पडे।

शास्त्र कहते है कि यात्रा का मुख्य उद्देश्य कल्मषनाश और पुण्य-सचय है। आरामतलब और विलासी जीवन जीते हुए तरह की शिथिलता आ जाती है, चारित्र्य-तेज क्षीण होता है, चित्त-वृत्ति प्रमादी बनती है और समाज-द्रोह टालने के प्रति जागरूक नही रहती है। ऐसी हालत मे मन मे जो थोडा कुछ खेद उठता है, उसे दबाने के लिए मनुष्य कुछ थोडा परोपकार करता है, अपने धन-सग्रह मे से कुछ दान करता है और मानता है कि हम निष्पाप हो गये। दान पानेवाले कृपण (कृपापात्र) लोक दाता की भरसक स्तुति करते है और फिर दाता भी मानने लगते है कि हम इस स्तुति के योग्य है और समाज के सच्चे कल्याण-कर्त्ता है।

वे नही जानते कि सच्चा धर्म, प्रधान धर्म दान नही, किन्तु त्याग है। समाजद्रोह करके धन इकट्ठा करना और उसमे से थोडा-सा विपद्-ग्रस्तो को देकर अपने को पुनीत मानना, यह अपने को और समाज को धोखा देना है। सच्चा धर्म है समाज-सेवा के लिए इन्द्रिय-निग्रह करना, उद्योग-

परायण सादगी से रहना और समूचे समाज के साथ अपनी एकता-का अनुभव करना ।

केवल मनुष्य-समाज के साथ ही नही—किन्तु सचराचर विश्व के साथ एकरूप हो जाना—यही है सच्चा जीवनानन्द । वेदान्त जिसे अद्वैतानन्द कहता है, वह यही विराट् जीवनानन्द है ।

जो लोग इन्द्रियोपासक है, विषय-लोलुप है, आरामतलव है और स्वार्थी है, उनमें विश्वात्मैक्य का आनन्द लेने की शक्ति क्षीण होती है और वे मानवी सस्कृति को समृद्ध नही कर सकते ।

अव हम आसानी से समझ सकेंगे कि आधुनिक 'टूरिस्ट' मे और हमारे धर्म-परायण यात्रियो में क्या और कितना फर्क है । 'टूरिस्ट' भी विराट् का दर्शन करते है और यात्री भी । लेकिन दोनो का फल अलग है । विराट् के दर्शन से टूरिस्ट का क्षुद्र व्यक्तित्व रवर के फुग्गे के जैसा वढता जाता है और वह मानता है कि उसके व्यक्तित्व का विकास हुआ । धर्म-परायण यात्री जव विराट् का दर्शन करता है तव तितिक्षा और कष्ट के द्वारा अपने व्यक्तित्व को शून्य करता है, विराट् का ध्यान करने की शक्ति कमाता है और विराट के साक्षात्कार मे अपने व्यक्तित्व की आहुति दे देता है ।

× × ×

जव मैं जमनोत्री की यात्रा कर रहा था, तव किसी वृद्ध यात्रा-परायण साधु से सुना कि काश्मीर मे अमरनाथ एक यात्रा का धाम है । ऊँचे-ऊँचे पहाड लाघकर वहा जाना पडता है । चट्टान और वर्फ को छोडकर वहा कुछ भी नहीं है । घोडे पर सवार होकर गये तो घोडे के लिए घास भी साथ ले जाना पडता है । अगर खाना पकाना हो तो ईंधन भी साथ रखना पडता है । स्थान इतनी ऊँचाई पर है कि वहा घटो पकाने पर भी चावल पकते ही नही । वरतन के ऊपर ढक्कन रखकर उसपर अगर एक वडे पत्थर का वोझा रख दिया तो कभी-कभी चावल पक जाते है ।

साधु ने यह भी कहा कि अमरनाथ एक कुदरती गुफा है । उसके एक कोने मे, आप-ही-आप, वरफ का एक लिग वनता है । उसका चमत्कार यह है कि यह शिवलिग धीरे-धीरे वढते, पूर्णिमा तक वडा होता है और कृष्ण पक्ष मे अमावस्या तक पूरा गल जाता है । श्रावण-पूर्णिमा के दिन सैकडो

अमरनाथ से लौटते जब लाहौर पहुँचा तब वहा अमरनाथ की हमारी यात्र का उल्लेख पडित सातवलेकरजी से किया। उन्होने कहा, "मुझे भी यह यात्र करनी है।" बाद मे मैंने सुना कि उन्होने अमरनाथ की यात्रा तो की ही उसका वर्णन भी मराठी मे प्रकाशित किया।

मैंने अपनी यात्रा का वर्णन नही लिखा, इसके विषाद के कारण भी उस यात्रा का स्मरण अनेक बार होता रहा। किसीसे कर्जा लिया हो और पैसे वापस नही दे सके हो तो उस कर्जे का स्मरण जिस तरह होता रहता है, वैसी ही आजतक हालत रही।

इसलिए जब मेरे मित्र यशपाल जैन से सुना कि वे अमरनाथ हो आये है और अपनी यात्रा का वर्णन प्रकाशित करनेवाले है, तब मैंने उत्कण्ठा से कहा, "आप जरूर अपनी यात्रा का वर्णन जल्द प्रकाशित कीजिये। मै उसे पढना चाहता हूँ और अपने पुण्य-सस्मरण ताजे करना चाहता हूँ।"

और जब प्रकाशक के धर्म का पालन करके उन्होंने मुझसे कहा कि "तब तो आपको उसकी भूमिका लिखनी पडेगी," तब मैंने जवाब दिया, "अवश्य। अमरनाथ के प्रति मेरा जो ऋण है, वह कुछ कम होगा।"

यशपालजी सिद्ध-हस्त लेखक है। साहित्य-सेवा के लिए ही उन्होने अपना जीवन अर्पण किया है। 'सस्ता साहित्य मडल' के साथ उनका घनिष्ट सहयोग है। उनका लिखा हुआ 'जय अमरनाथ' पढते बडा आनन्द आया और मानो पूर्व जन्म के सस्कार फिर से जागृत हो गये। हमारे पूर्वज यात्रा का आनन्द लेते थे, लेकिन उसका वर्णन नही लिख सकते। उस कमी को दूर करने के लिए वे यात्रा का माहात्म्य लिखते थे। उसका कुछ नमूना इस पुस्तक के एक अध्याय में दिया है।

मै समझता हूँ कि हमलोगो को अब भारत की पुण्यभूमि के सब तीर्थ-स्थानो के वर्णन और माहात्म्य नए सिरे से लिखने चाहिए, जिसमे प्राकृतिक सौन्दर्य का यथार्थ चित्रण हो, जगह-जगह की जनता के लोकाचार का वर्णन हो, ऐतिहासिक और सास्कृतिक बातो का उल्लेख हो और केवल पुण्य-प्राप्ति का लेखा न देते हुए, जीवन-शुद्धि और जीवन-समृद्धि का आध्यात्मिक साक्षात्कार हो।

नई दिल्ली, २ सितम्बर १९५५

—काका कालेलकर

विषय-सूची

जय अमरनाथ !

: १ :

दिल्ली से श्रीनगर

गर फिरदौस बर रूए जमींअस्त ।

हमीं अस्तो, हमीं अस्तो, हमीं अस्त ।।

अगर जमीन पर कही स्वर्ग है तो वह यही (काश्मीर में) है, यही है, यही है।

काश्मीर जाने की इच्छा बहुत दिनो से हो रही थी। उसके महान प्राकृतिक सौदर्य, कला-कारीगरी तथा स्वास्थ्यप्रद जीवन के बारे मे मुद्दत से पढता और सुनता आया था और अब जबकि राजनैतिक उतार-चढावो ने उसे दुनिया के नक्शे पर सामने ला दिया था तो स्वभावत हमारी दिलचस्पी उसमे और बढ गई थी, लेकिन इच्छा होने और अनेक बार प्रयत्न करने पर भी जाने का सुयोग न मिला। पिछले साल तो परमिट तक आ गये थे, लेकिन ऐन मौके पर जाना रुक गया। इस वर्ष सोचा कि कुछ भी हो, वहा अवश्य जाना है, सो बिना अधिक सोचे तथा ठहरने आदि का खास प्रबध किये ३ सितम्बर को चल पडे। हमारी पार्टी मे कुल ८ जने थे। हिन्दी साहित्य मदिर, अजमेर के सचालक श्री जीतमलजी लूणिया, श्री मार्तण्डजी उपाध्याय, उनकी पत्नी श्रीमती लक्ष्मीदेवी; आरोग्य मदिर, गोरखपुर के सचालक श्री विट्ठलदास मोदी; लेखक की पत्नी श्रीमती आदर्शकुमारी, पुत्री अन्नदा, चिरजीव सुधीर और लेखक। रात को दिल्ली से काश्मीर मेल द्वारा पठान-

कोट को रवाना हुए। गाड़ी चली तो सामान जचा कर आपस मे बाते करने लगे। बहुत दिनो की इच्छा पूरी हो रही थी, इससे सबको बडी खुशी थी, लेकिन काश्मीर की यह पहली यात्रा होने के कारण बहुत-सी आशकाए भी मन मे उठती थी। पठानकोट सवेरे पहुच जायगे। फिर दो दिन बस का सफर करना होगा। किसी की तबीयत खराब हो गई तो? श्रीनगर में कहां ठहरेगे? यात्रा मे मार्गदर्शन कौन करेगा? आदि-आदि बहुत-से प्रश्न मन मे उठते थे, लेकिन उनका समाधान कौन करता?

रात भर का सफर था। थोडी देर चर्चा कर-करा कर सो गये। सवेरे आख खुली तो पठानकोट आने वाला था। पौने सात पर वहा पहुचे। काश्मीर के लिए यही अन्तिम स्टेशन है। आगे कार या बस द्वारा जाना होता है। हवाई जहाज भी जाता है, पर जिन्हे काश्मीर की प्राकृतिक सुषमा के दर्शन करने है, उन्हे बस या कार से ही जाना चाहिए। समय अधिक अवश्य लगता है, पर यात्रा का असली आनद इसी मे आता है। पहले रेल जम्मू तक जाती थी, लेकिन भारत-विभाजन के बाद कुछ रास्ता पाकिस्तान में चले जाने के कारण अब पठानकोट तक ही रह गई है। पठानकोट काफी बडी जगह है। बस्ती घनी और फैली है। लम्बा-चौडा बाजार है, जिसमे सब चीजे मिल जाती हैं।

सामान तुलवाने, नहाने-धोने, नाश्ता करने आदि में करीब एक घटा लग गया। ८-२० पर टूरिस्ट बस से रवाना हुए।

बस मे, देश के अलग-अलग भागो के २१ मुसाफिर थे। एक गुजराती-परिवार मोम्बासा (अफ्रीका) से आया था। श्रीनगर तक २६७ मील का रास्ता था, जो हम लोगो को बस के द्वारा तय करना था।

११ मील पर लखनपुर आया। वह भारत और काश्मीर की सीमा पर है। वहा हम लोगो के परमिट देखे गये और सामान जाचा गया। कोई एक घटा लगा। फिर आगे बढ़े।

जम्मू तक का रास्ता बहुत मामूली है। ऐसा लगता है, मानो किसी मैदानी प्रदेश मे चल रहे हैं। न ऊचे पहाड, न जगल। पठानकोट से जम्मू ६७ मील है। १२ बजे के लगभग पहुचे। जम्मू काश्मीर का एक बड़ा नगर है। शीतकाल मे काश्मीर की राजधानी श्रीनगर से हटकर यही आ जाती है। उचाई कुल १३०० फुट है। कई दर्शनीय स्थल है। रघुनाथजी का मदिर बडा विशाल है। उसे देखकर और बाजार मे एक चक्कर लगा कर आगे बढे।

अब मार्ग इतना सुन्दर था कि बिना देखे उसकी कल्पना नही की जा सकती। उचाई ज्यो-ज्यो बढती गई, दृश्य एक-से-एक बढकर आते गये। सयोग से हमारी टोली मे वयोवृद्ध से लेकर महिलाए तथा बालक सब थे, पर ऐसा जान पडता था, मानो उत्साह ने आयु के अतर पर आवरण डालकर सबको एक पक्ति मे खडा कर दिया। बात-बात पर हम लोग अट्टहास कर उठते थे और प्रत्येक सुन्दर दृश्य को देखकर आनन्द से उछल पडते थे।

४२ मील पर ऊधमपुर आया वह महत्वपूर्ण सैनिक केन्द्र है। शाम को चार बजे हम लोग कुद पहुचे। उसकी उचाई ५७०० फुट है। वडी सुन्दर जगह है। चीड और देवदार के घने जगल है। जलवायु स्वास्थ्यप्रद है।

रात हम लोगो ने कुद से कुछ आगे वटोत मे बिताई। यह स्थान कुद से थोडी निचाई पर है। ठहरने के लिए डाक बगला है। छोटी-सी बस्ती और बाजार भी है। अगले दिन सबेरे ही वहा से रवाना होकर ८ वजे रामवन पहुचे। रास्ते की शोभा वर्णनातीत थी। पठानकोट से निकलते ही रावी नदी मिली थी, जम्मू से कई मील तक तवी साथ रही और वटोत के बाद चिनाव मिल गई। उछलती-कूदती, कल-कल निनाद करती वह वही जा रही थी। पर्वतो के योग से उस द्वारा

निर्मित प्राकृतिक दृश्य अद्भुत थे।

वनिहाल पहुचे तो दोपहर हो चुका था। वहा भोजन किया, कुछ फल खरीदे और फिर आगे बढे। अब आगे चढाई-ही-चढाई थी। वनिहाल की सबसे ऊची चोटी पीरपचाल है, जो ८९८९ फुट है। कहते है, दुनिया का यह सबसे ऊचा मार्ग है। सडको के पाच-पाच चक्कर यहा दिखाई देते है और मोटरे और आदमी ऊपर या नीचे खिलौने जैसे जान पडते है।

पीरपचाल के इधर जम्मू घाटी है, उधर श्रीनगर घाटी। यहा वर्ष मे कई महीने वर्फ जमी रहती है और रास्ता वन्द रहता है। वनिहाल के पास से ५ मील लम्बी सुरग बनाने की योजना चल रही है। उसके पूरे हो जाने पर श्रीनगर का रास्ता बारहो महीने खुला रहेगा।

पीरपचाल के उधर के दृश्य दूसरी ही तरह के है। शाली (धान) के खेत ऐसे लगते है, मानो किसी ने सीढिया बना दी हो। आगे उतार-ही-उतार है।

रास्ते मे एक ओर को थोडा-सा हटकर वेरीनाग आया। यह झेलम का उद्गम है। बडा सुन्दर स्थान है। बीच मे एक कुण्ड है, जिसका जल एकदम नीला दिखाई देता है। पानी इतना साफ कि ५६ फुट की गहराई होते हुए भी तली साफ दिखाई देती थी। यहा अच्छा-खासा उद्यान है, जिसमे सेव और वग्गूगोशे के बहुत से पेड है। अनेक रगो के फूल और प्रपात इस स्थान को अनुपम सौदर्य प्रदान करते है।

आगे गाजीगुण्ड आया। यहा से श्रीनगर तक मैदान-ही-मैदान है। लगभग ५००० फुट की उचाई पर इतना बडा मैदान कैसे बन गया, देखकर आश्चर्य होता है। सडक के दोनो ओर सफेदे के पेडो की कतारे है, जो प्रहरी जैसी लगती है। पाम-पुर से आगे केसर की क्यारिया देखी, लेकिन केसर का मौसम न होने के कारण वे खाली पडी थी।

५ सितम्बर को तीसरे पहर लगभग ४ बजे श्रीनगर पहुचे। बस के अड्डे पर ज्योही गाडी रुकी कि होटल और हाउसबोटवालो ने घेर लिया। लगे शोर मचाने। हम लोगो ने उस ओर ध्यान नही दिया और अपना सामान सभालने लगे। हममे से एक साथी होटल और हाउसबोट देखने गये। ठहरने की व्यवस्था कहा की जाय, यह एक समस्या थी। जिनको सूचना दी थी, उनमे से कोई भी बस के अड्डे पर नही आया था, इससे चिन्ता हुई। आखिर काफी पशोपेश और भागदौड के बाद हम लोग गोगजीबाग मे श्रीमती कृणा मेहता के यहा पहुचे। इन बहन के पति मुजफ्फराबाद के गवर्नर थे और जब कबाइलियो का काश्मीर पर आक्रमण हुआ तो उसकी रक्षा करते हुए वह शहीद हो गये। कृष्णाबहन अब वहा वीमेस रिलीफ केन्द्र का सचालन कर रही है। वह कई बार काशमीर आने का आग्रह कर चुकी थी।

कृष्णाबहन के यहा सामान रखकर जान-मे-जान आई। एक रात रेल मे और दो दिन बस मे गुजरे थे। इससे शरीर बडा थका-सा था। सामान व्यवस्थित रखकर खूब नहाये और जल-पान किया। नई जगह थी, मौसम सुहावना था। घूमने निकल पड़े।

श्रीनगर काश्मीर की राजधानी है। यही से लोग काश्मीर के विभिन्न दर्शनीय स्थानो की यात्रा करते है।

: २ :

यात्रा की योजना

रात को दस बजे तक खूब घूमे। शिकारे मे वैठकर झेलम की सैर की, वाजार मे घूमे, गाधी आश्रम के व्यवस्थापक श्री रामसुमेरभाई के यहा मिलने गये। वे कही वाहर गये हुए थे।

अत मिले नही। काफी देर हो चुकी थी। ठिकाने पर लौटे और सो गये।

सबेरे उठे और जलपान किया तबतक रामसुमेरभाई आ गये। हम लोग मिलकर बैठे और आगे का कार्यक्रम बनाने लगे। रामसुमेरभाई ने कहा, "काश्मीर का सबसे सुन्दर स्थान अमरनाथ है। वहा जरूर जाना चाहिए। मेरी राय है कि सबसे पहले वही हो आइये। सर्दी बढती जा रही है। आप लोग एक महीना देर करके आये है। थोडी सर्दी और बढी तो अमरनाथ की यात्रा असभव हो जायगी।"

कृष्णाबहन ने उनका अनुमोदन करते हुए कहा, "यह बात बिल्कुल सही है। यहा की और जो चीजे देखनी है, जैसे बाग-बगीचे, गुलमर्ग, खिलनमर्ग आदि वे आप लोग लौट कर भी देख सकते है। उनके लिए उतने समय और मेहनत की जरूरत नही है।"

रामसुमेरभाई ने मुस्कराकर कहा, "अमरनाथ हो आये और ये जगहें छूट भी गई तो आप लोगो को मलाल नही होगा, आप लोग घाटे में नही रहेंगे। काश्मीर की सबसे आकर्षक और रोमाचकारी यात्रा अमरनाथ की है। मेरी सलाह है कि आप लोग वहा जरूर जाय और हो सके तो कल ही चले जाय।"

हम लोगो ने दर्शनीय स्थलो की सूची बनाई और सोचने लगे कि पहले आसपास के दो-चार स्थान देख ले तब अमरनाथ जाय या पहले अमरनाथ हो आवे। एक मन होता था कि थोडा रुक कर अमरनाथ जाना ठीक होगा, पर साथ ही ख्याल होता था कि थोडा रुके तो कही उस यात्रा से वचित न रह जाना पडे।

रामसुमेरभाई और कृष्णाबहन दोनो का आग्रह था कि पहले अमरनाथ जाय। रामसुमेरभाई ने यह भी बताया कि यात्रा बडी कठिन है, टट्टुओ पर बैठे-बैठे पीठ अकड जाती है, टागे छिल जाती है, पर साथ ही उस यात्रा में जो आनन्द

आता है, वह काश्मीर के किसी भी दूसरे स्थान की यात्रा में नही आता।

काफी सोच-विचार के बाद हम लोगो ने उनकी बात मान ली। तय किया कि दो दिन श्रीनगर मे आराम करके और वहा की जो चीजे देख सके वे देखकर ८ तारीख की सुवह हम लोग पहलगाम को रवाना हो जाय।

श्रीनगर झेलम के किनारे बसा है। प्राकृतिक दृष्टि से बड़ा सुन्दर है। ऊचे-ऊचे पर्वत, घने वन, नाना रग के फूल, चिनार के ऊचे-ऊचे वृक्ष, सेब के बगीचे, स्वस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे, ये सव देखते ही बनते है। हाउसबोटे, डल झील तथा शालीमार, चश्माशाही, निशात आदि बगीचे वहा की विशेष शोभा है।

दो दिन हम लोग श्रीनगर मे खूब घूमे। डल झील की अच्छी तरह सैर की, उसमे खिले कमल-वन देखे, वाग-वगीचो मे घूमे, सात पुलो का शिकारे मे बैठकर चक्कर लगाया, शहर मे घूम कर पेपियरमेशी, लकडी, ऊन आदि का सामान देखा, वहा के रहन-सहन का अध्ययन किया, गरीबी देखी, पर डल झील और उसके नेहरू पार्क को देखकर दिल बाग-बाग हो गया। गर्मी इस कदर थी कि जी अकुलाता था और गदगी को देखकर मन को बडी हैरानी होती थी। सात पुल देखते समय लगभग तीन-चौथाई शहर आखो के आगे घूम गया था। झेलम के किनारे दोनो ओर खडे काठ के मकान बडे अच्छे लगे थे, लेकिन गरीबी और गदगी उनसे साफ टपकती थी। आश्चर्य होता था कि कैसे इन्ही मकानो मे काश्मीर की अद्वितीय कला पोषण पाती है।

दो दिन यो ही निकल गये, मालूम भी नही पड़े। ८ तारीख को सुबह सबसे पहली बस से हमारी पार्टी पहलगाम के लिए रवाना हो गई।

: ३ :

पहलगाम में

श्रीनगर से हम लोग रवाना हुए तो ९॥ वज चुके थे। वस वाले से एक दिन पहले कह रक्खा था कि हमारे लिए आगे की सीटे रक्खे, लेकिन जवतक अड्डे पर पहुचे तवतक कुछ यात्रियो ने आकर आगे की सीटे घेर ली थी। वस-कम्पनी के मैनेजर से कहा-सुनी की, लेकिन कोई परिणाम न निकला। हार कर वीच की जो सीटे मिली, उन्ही पर वैठ गये।

श्रीनगर मे कई आदमियो और कम्पनियो की वसे चलती है, लेकिन सीटो पर नम्वर न होने के कारण जो पहले पहुँच जाता है वही आगे की सीटो पर जम जाता है। सीटे वैसे सभी एकसी है, लेकिन पीछे की सीटो पर धक्के अधिक लगते है और उन पर वैठने वालो को कभी-कभी चक्कर आ जाते है, जी भी मिचलाने लगता है। हम लोगो ने तो विल्कुल आखिरी सीट पर पठानकोट से श्रीनगर तक की यात्रा की थी। कुछ भी नही हुआ। हाँ, धक्के तो अधिक लगते ही है। यात्रियो को चाहिए कि पहले ही से वस के छूटने का समय मालूम करले और जल्दी-से-जल्दी वहाँ पहुच जाय। दूसरे, जहा तक हो सके, सरकारी वस से जाय। वे अधिक सुविधाजनक होती है।

हम लोग प्राइवेट वस से रवाना हुए थे, जो वडी ही रद्दी थी। थोडी-थोडी दूर पर उसका इजन इतना गरम हो जाता था कि रोककर पानी डालना पडता था। कभी-कभी तो इतनी भाप निकलने लगती थी कि आग लग जाने का डर मालूम होता था।

१६ मील चल कर अवन्तीपुर आया। यहा राजा अवन्ती के नवी शताब्दी के वनवाये मदिरो के भग्नावशेष है। मदिर के खम्भे बडी सुन्दर कारीगरी से युक्त है। वेल-बूटे देखने योग्य

है। मदिरो के शिखर गिर गये है और अब केवल खभे और दीवारे खडी है। इन मदिरो की कुछ मूर्तिया श्रीनगर के अजायब-घर मे सुरक्षित है।

रास्ता सामान्य है। ऐसा लगता है, मानो किसी समतल भूमि पर चल रहे हो। ५५०० फुट की उचाई का अनुमान ही नही होता। गर्मी काफी थी।

३९ मील पर मटन आया। जिस तरह भारत मे गया का धार्मिक महत्त्व है, उसी भाति काश्मीर मे मटन का है। यहा पर हिन्दू लोग पितरो का पिण्डदान, श्राद्ध आदि करते है। मटन मार्तण्ड का बिगडा रूप है, जिसका अर्थ है सूर्य। यह स्थान सूर्य के मदिर और झरने के लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध है। हम लोगो की बस जैसे ही वहा रुकी कि दर्जनो पडो का एक साथ आक्रमण हो गया। उनके हाथ मे लम्बी-लम्बी बहिया थी और वे यात्रियो को घेर कर पूछते थे कि कहा से आये है। पण्डो के प्रान्त, जिले और शहर बटे है। हमारी पार्टी के एक साथी के बाबा कभी वहा आये थे। उनके हस्ताक्षर देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

मार्तण्ड-मन्दिर का निर्माण रामादित्य ने पाचवी शताब्दी मे कराया था। स्थान सुन्दर है और यहा का जलवायु स्वास्थ्यवर्द्धक कहा जाता है। हम लोगो ने झरने मे जल पिया, मदिर के दर्शन किये और जैसे-तैसे पडो से पीछा छुडा कर पहलगाम की ओर रवाना हुए।

कुछ आगे चलकर चढाई-ही-चढ़ाई थी। दृश्य बडे सुन्दर और रमणीक थे। हरियाली खूब थी और हमारे मनोरजन को बढावा देने के लिए झरने थे। २१ मील का यह रास्ता जरा-सी देर मे पार हो गया। १२। बजे पहलगाम पहुच गये।

वैसे अमरनाथ की यात्रा का प्रारम्भ, जैसा कि पाठक आगे चलकर देखेगे, श्रीनगर से होता है, लेकिन असली यात्रा पहलगाम से ही शुरू होती है। बस वही तक जाती है और आगे का सफर

टट्टुओ पर या डाडी में किया जाता है। कुछ लोग पैदल भी जाते है, लेकिन बहुत कम।

श्रीनगर से रवाना होते समय रामसुमेरभाई ने पहलगाम के गाधी आश्रम के प्रमुख कार्यकर्त्ता श्री श्यामलालभाई के नाम एक पत्र दे दिया था। पहलगाम पहुचकर हम लोगो ने सामान अड्डे पर रक्खा और विट्ठलजी और मै गाधी-आश्रम की खोज मे निकले। उस समय बादल घिरे थे और बूदा-बादी हो रही थी। खोजने पर गाधी आश्रम पास ही निकला।

श्यामलालभाई मिल गये। उन्होने बडी आत्मीयता से हम लोगो को ठहरने के कई स्थान दिखाये और अन्त मे काश्मीर खालसा होटल मे, जो बाजार के एक नुक्कड पर था, एक कमरा तय करके हमारा सामान उसमे लगवा दिया।

पहलगाम छोटी-सी जगह है, लेकिन स्थान बडा मनोरम और स्वास्थ्यप्रद है। समुद्रतट से उचाई ७२००, फुट है। लिदर-घाटी के मध्य मे बसे होने के कारण उसकी शोभा का क्या कहना! लिदर नदी यहा तीन धाराओ मे बट गई है। इन धाराओ का कलकल निनाद बराबर सुनाई देता रहता है। ऊची-ऊची पर्वत-मालाए, चीड आदि के गगन-चुम्बी वृक्ष, हिमाच्छादित गिरि-शृग, आदि यात्री को मुग्धकर देते है। छोटा-सा बाजार है, जिसमे जरूरत की सब चीजे मिल जाती है। खाने-पीने के लिए कई ढाबे है, साग-सब्जी, फलो, गरम कपडे, दवाइयो, फोटो वगैरा की कई दुकाने है। तारघर और डाकखाना है। चार-पाच अच्छे होटल है। सरकारी अस्पताल है, नदी के किनारे यात्रियो के लिए कुछ कोठरिया भी बनी है, लेकिन ठहरने के लिए सबसे आनन्ददायक चीज तम्बू है, जो बाजार से किराये पर मिल जाते है। जरा-सी देर मे जहा चाहे लगवा सकते है। एक सप्ताह के पदह-बीस रुपये देने पडते है। आठ आना रोज जमीन का सर-कार को देना पडता है और यदि बिजली चाहे तो वह भी पाच-

छ. रुपये खर्च करने पर आसानी से मिल जाती है।

खा-पीकर जरा सुस्ता कर घूमने निकले। बाजार देखा, नदी के किनारे सैर की और पहाड पर चढकर एक झरना देखने गये, जिसका जल बडा ही स्वास्थ्यप्रद माना जाता है। दिल्ली से चलते समय पता चला था कि हमारे मित्र श्री विष्णुहरि डालमिया सकुटुम्ब पहलगाम जा रहे है और हमसे पहले ही पहुच जायगे। डाकखाने से उनका अता-पता पूछ करके लौटे तो बाजार मे उनसे भेट हो गई। इलाहाबाद के ला जर्नल प्रेस के सचालक श्री मदनमोहन तायल भी सपरिवार मिले। पठानकोट से आते समय बस मे कई यात्रियो से मित्रता हो गई थी। उनमे से कुछ बाजार मे चहलकदमी करते मिले। शाम को जब जल-प्रपात देखने जा रहे थे तो ऊपर से कुछ लोगो को उतरते देखा। एक व्यक्ति बाह के सहारे एक बालक को उठाये तेजी से नीचे आ रहा था। रास्ता ऊबडखाबड था, पर वह उस ओर से तनिक भी चिन्तित न था। एक बालक को नीचे पहुचाया, फिर उसी तेजी से ऊपर गया और दूसरे को उसी तरह नीचे ले आया। उसके पीछे एक युवती छोटे बालक को गोद मे लिये वैसी ही बेफिक्री से आ रही थी। उन्हे रोक कर हम लोगो ने बात की तो पता चला कि वह सारा कुनबा पिछले हफ्ते अमरनाथ की यात्रा करके लौटा है। युवती ने मुस्कराते हुए कहा, "मै तो इस गोद के बालक को लेकर गई थी।" सुनकर अच्छा लगा और अमरनाथ की यात्रा का हमारा सकल्प और प्रबल हुआ।

झरने के पास थोड़ी देर बैठकर हम लोग पहाड के ऊपर-ही-ऊपर के लम्बे रास्ते से उतरे। दाए-बाए ऊचे-ऊचे चीड के अनगिनत पेड खडे थे और ऊपर से घाटी मे बसे पहलगाम की बस्ती और लिदर की जल-धाराओ को देखकर ऐसा जान पड़ता था, मानो कोई चित्र देख रहे हो।

आगे बढने पर एक बालक टट्टू के साथ मिला। उसे

रोककर हम लोगो ने बारी-बारी से टट्टू की सवारी की और अपने-अपने साहस की परीक्षा कर ली। विश्वास हो गया कि अमरनाथ की यात्रा मे हम लोग डरपोक सवार नही साबित होगे।

नदी का पुल पार करते समय दिल्ली की पार्टी फिर मिल गई। बातचीत मे मालूम हुआ कि विष्णुजी सपरिवार १० तारीख को अमरनाथ की यात्रा का कार्यक्रम बना रहे है। हम लोगो ने भी निश्चय किया कि अगर कोई विशेष बात न हुई तो १० को ही चलने का ठीक रक्खे। एक और भी कारण था। १० सितम्बर को त्रयोदशी थी। हम लोगो ने सोचा कि दो राते मार्ग मे बिता कर भाद्रपद पूर्णिमा को अमरनाथ के दर्शन करेगे तो अधिक अच्छा रहेगा।

अमरनाथ की गणना भारत के महान् तीर्थों मे की जाती है। उसका इतना माहात्म्य है कि रास्ते की भयकरता तथा मुसीबतो की चिता न करके प्रतिवर्ष सहस्रो नर-नारी देश के कोने-कोने से वहा जाते है और शिव, पार्वती तथा गणेश की हिममूर्तियो के दर्शन कर जीवन की धन्यता अनुभव करते है। यात्रियो मे सभी मत-मतातरो और धर्मों के लोग होते है और जब वे मिल कर वहा की यात्रा करते है तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो वे सब एक ही परिवार के सदस्य हो।

प्रकृति-प्रेमियो के लिए भी अमरनाथ का महत्त्व और आकर्षण कम नही है। रास्ते मे ऐसे-ऐसे मनोहारी दृश्य मिलते है और स्वय अमरनाथ का रूप इतना उदात्त एव भव्य है कि उन्हे देख कर शुष्क-से-शुष्क व्यक्ति का भी हृदय आनद से उछल पडता है। सच तो यह है कि बिना अमरनाथ की यात्रा के काश्मीर का प्रवास पूर्ण नही माना जा सकता। जबतक असह्य जाडे तथा दुर्लंघ्य हिम के कारण वहा का रास्ता बद नही हो जाता तबतक देश-विदेश के पर्यटको तथा धर्मपरायण नर-नारियो का आवा-

गमन वना रहता है। आषाढ से क्वार तक वहा जाने वाले व्यक्तियो की औसत सख्या ३५-४० प्रतिदिन के लगभग होती है। मेले की वात अलग है। उसमे तो हजारो यात्री सम्मिलित होते है।

अमरनाथ का रास्ता वैसे आषाढ से क्वार तक के चार महीनो मे खुला रहता है, लेकिन यात्रा का सर्वोत्तम समय श्रावण अर्थात् अगस्त का पहला सप्ताह माना जाता है। उन दिनो बर्फ कम होती है, जाडा विशेष कष्टकर नही होता और सव से वडी वात यह है कि श्रावणी पूर्णिमा का चन्द्रमा ज्योही अपनी आभा से भूतल को दिव्यता प्रदान करता है, गुफा की मूर्तियो के बडे ही विलक्षण रूप मे दर्शन होते है। कहते है, वैसे दर्शन यात्रियो को दूसरे दिनो मे नही होते। मूर्तियो की बर्फ पिघलने लगती है और वाद मे वे हिम का एक ढेर-मात्र रह जाती है।

: ४ :

मन की दुविधा

घूमघाम कर रात को डेरे पर लौट आये, भोजन की व्यवस्था की और खा-पीकर वैठे कि इतने मे एक पडा महाराज आ गये। उन्होने वताया कि वह दो-तीन दिन पहले ही अमरनाथ से लौटे है। उन्होने वहा का कुछ ऐसा डरावना चित्र खीचा कि हम लोग सोच मे पड गये। वह वोले, "अजी, रास्ता वडा भयानक है। इसपर, सुना है कि कल पानी पड गया है। फिसलन के साथ-साथ जाडा वेहद हो गया होगा।"

हमने कहा, "और भी तो वहुत-से लोग जा रहे है।"

उन्होने जवाव दिया, "देखिये, कितने पहुचते है।"

फिर कुछ रुककर वोले, "वच्चो के साथ जाने की सलाह तो मै हर्गिज नही दूगा।"

और वहुत-सी वातें कह-कहा कर पडाजी चले गये । उनके इस वर्णन से मन मे एक दुविधा पैदा हो गई । श्रीनगर से चले थे तभी से सुधीर को कुछ-कुछ सर्दी हो रही थी । यहा उसने ठण्डे पानी मे खूव हाथ दिया, झरने के पानी मे खेला । नतीजा यह हुआ कि रात को सर्दी और वढ गई और उसका गला वैठ गया । पडाजी जिस समय उठकर गये, हमारा ध्यान वार-वार सुधीर की ओर जाने लगा । यदि उसकी तवीयत और विगड गई तो ? निमोनिया हो गया तो ? रास्ते मे खूव सर्दी होगी, वरफ पर चलना पडेगा, आदि-आदि विचार मन मे उठने लगे । आदर्श पहले तो चुप रही, फिर कहने लगी, "सुधीर को लेकर जाने की मेरी राय नही है । उसे अगर कुछ हो गया तो लोग हमे पागल कहेगे ।" जीतमलजी, जिन्हे हम सव प्रेम और आदर से 'मालक' कहते है, का मन भी डावाडोल होने लगा । उन्होने कहा, "मेरी तवीयत कुछ गिर-सी रही है ? मन मे उत्साह नही है ।" लक्ष्मीभाभी, विट्ठलजी और अन्नदा के मन मे हिचक नही थी । सुधीर तो जुकाम से पीडित होने पर भी जाने के लिए रस्सी तुडाकर भागने को हो रहा था, पर मेरा और आदर्श का मन सुधीर के कारण कभी इधर तो कभी उधर होता था । यही चर्चा करते-करते हम लोग सो गये ।

सवेरे उठे तो सुधीर का जुकाम जोरो पर था । रात को उसे थोडी हरारत भी हो गई थी, लेकिन अमरनाथ जाने के वारे मे उसके उत्साह मे कोई कमी नही आई थी । वह वार-वार अपनी मा से कहता था, "तुम भले ही रह जाना, मै तो जरूर जाऊगा ।"

तैयारी के लिए आज का ही दिन वाकी रहा था । अगले दिन तो चल ही देना था, पर हम लोग कोई निर्णय नही कर पाते थे । आदर्श वार-वार कहती थी, "मै सुधीर के पास रह जाऊगी । तुम लोग चले जाओ ।" मालक कहते थे कि रह जाय तो उसे मै रख लूगा ।

यही स्थिति चलती रही। मन मे अस्थिरता थी, लेकिन जाने के लिए तैयारी न करते तो जाने वालो के भी रह जाने का डर था। इसलिए श्यामलालभाई से कहा कि सामान वगैरा तो इकट्ठा कर ही लिया जाय। १०-११ बजे घूमने निकले तो मालूम हुआ कि बिडला-परिवार के श्री बसतकुमार बिडला अपने दल के साथ अमरनाथ से लौट आये है। उनकी पार्टी के कुछ लोग भी मिले। उन्होने बताया कि डरने की कोई बात नहीं है। पानी थोडा जरूर पड गया है, लेकिन रास्ता ठीक है। उस पार्टी के साथ काशीनाथ नाम के एक पडा गये थे। वह भी मिले। उन्होने कहा कि आप लोग जरूर जाय। रास्ता उतना बुरा नही है, जितना कि बताया जाता है।

श्रीनगर की अपेक्षा पहलगाम मे सर्दी बहुत थी, लेकिन मौसम साफ था। आसमान मे बादलो का नाम भी नही था, धूप निकली थी। इससे अनुमान हुआ कि ऊपर अब वर्षा की अधिक सभावना नही है।

दोपहर को सुधीर को एक केमिस्ट को दिखाने ले गया। उससे बात हो ही रही थी कि दुकान मे एक सज्जन आये। केमिस्ट ने अदाज से कहा कि वह डाक्टर मालूम होते है। पूछा तो उन्होने कहा, "मै डाक्टर नही हू। आपकी ही तरह यात्री हू, पर हमारी टोली मे दो डाक्टर है। जरूरत हो तो बुलाऊ।" मेरे 'हा' कहने पर वह बाजार मे घूमते हुए अपने डाक्टर मित्र को बुला लाये। उन्होने सुधीर का गला देखा, छाती देखी और कहा कि चिंता की कोई बात नही है। ठीक है।

मैने पूछा, "इसे इस हालत मे अमरनाथ ले जाय ?"

डाक्टर ने फौरन उत्तर दिया, "जरूर, भगवान पर भरोसा रक्खे। फिर हम लोग भी तो आपके साथ ही चल रहे है।"

इतना कहकर डाक्टर ने एक नुस्खा लिखकर दिया और कहा, "भगवान ने चाहा तो इस दवा से शाम तक बहुत

आराम हो जायगा।"

इन वगाली डाक्टर की वातो से हम लोगो को वडा दिलासा मिला, हिम्मत वधी। डाक्टर दार्जिलिग से आये थे और उनकी पार्टी भी अगले दिन अमरनाथ जा रही थी। वाजार मे लोगो से चर्चा करने पर मालूम हुआ कि अगले दिन लगभग डेढ सौ आदमी यात्रा पर जा रहे हैं।

हम लोगो ने कई आदमियो से जाने के वारे मे पूछा। सव की अलग-अलग राय थी। कोई कहता था कि रास्ता वडा वीहड है और अव जाने का मौसम नही रहा। कोई कहता कि ऐसी कोई वात नही है। आखिर इतने आदमी जा ही रहे है। रास्ता वहुत खराव होता तो क्यो जाते ? कोई कहता कि वच्चो के साथ जाना मुनासिब नही होगा। लेकिन गाधी-आश्रम के श्यामलालभाई वरावर सवके जाने का आग्रह कर रहे थे। वह वात-वात मे कहते, "वेफिक्र रहो।" उनके मुह से कभी कोई निराशाजनक वात निकली हो, मुझे याद नही। उन्होने कहा कि कपडे साथ मे काफी होने चाहिए, फिर कोई फिक्र की वात नही है। वच्चे भी मजे में जा सकते हैं।

अव एक समस्या यह खडी हुई कि अन्नदा और सुधीर को ले जाया जाय तो उनके गरम कपडो का पूरा-पूरा वन्दोवस्त होना चाहिए। दोनो के पास पूरी वाह के स्वेटर थे, कोट थे, लेकिन टागो को ढकने के लिए पतलून या पाजामा जैसा कुछ नही था। श्यामलालभाई को मैंने यह कठिनाई वताई तो अपने स्वभाव के अनुसार उन्होने फौरन कहा, "वेफिक्र रहिये। हम आश्रम के अपने टेलर-मास्टर से दोनो के लिए पतलून तैयार करवा देंगे। वक्त पर मिल जायगी।" इतना कहकर उन्होने पसन्द करने के लिए कई तरह की ट्वीडे सामने मेज पर निकालकर रख दी। हमने सोचा कि बच्चे साथ जाय या न जाय, कपडे सिल जायगे तो काश्मीर की ठड मे काम आ जायगे। दोनो की पतलूनो के

लिए दो अलग-अलग कपडे पसन्द किये और टेलर-मास्टर को, जो आश्रम मे ही वैठ कर सिलाई करते थे, सौंप दिये। मन मे डर था कि कहीं कपडो को बिगाड़ न दे, पर उन्हे देने के सिवा और कोई चारा ही न था।

मन डावाडोल था, फिर भी श्यामलालभाई की मदद से हम लोगो ने साथ मे जाने वाले सामान की सूची तैयार की। विचार हुआ कि कुछ तो पूड़िया और साग तैयार कराले और कुछ ऐसा सामान रहे कि जिससे मौका मिलने पर स्वय खाना तैयार कर लिया जाय। ओढने-बिछाने के लिए श्यामलालभाई ने आश्रम से कुछ नमदे और लोइयो का प्रबन्ध कर दिया। साग-भाजी, फल, स्टोव, लालटेन, पूजा की सामग्री, आटा, चावल, मिट्टी का तेल, स्प्रिरिट आदि-आदि चीजो की लम्वी सूची वन गई और श्यामलालभाई ने आश्वासन दिया कि रात तक वह सारी चीजे इकट्ठी कर देगे और अत मे मुस्कराते हुए कह दिया, "आप लोग वेफिक्र रहे।"

दोपहर तक का समय योही निकल गया। यद्यपि डाक्टर ने दिलजमई कर दी थी, फिर भी एक साथ इधर या उधर निश्चय नही होता था। सुधीर वार-वार कहता था कि म जरूर जाऊगा। आदर्श कहती थी कि मै सुधीर को ले जाने की हर्गिज सलाह नही दूगी। मालक की सुस्ती चल रही थी। उनकी सलाह थी कि सुधीर को नही ले जाना चाहिए। विट्ठलजी कहते थे कि जरूर ले चलना चाहिए। लक्ष्मीभाभी चुपचाप सवकी बाते सुनती रही। अत मे उन्होने वडे उत्साह और विश्वास के साथ कहा, "इसमे इतना सोचने की क्या बात है ? भगवान का नाम लो और ले चलो, मेरी जिम्मेदारी पर ले चलो। भगवान सव ठीक करेगे।"

भाभी का इतना कहना था कि मन की दुविधा दूर हो गई और एक साथ सवके चलने का निश्चय हो गया। वात असल मे

यह थी कि इस महान यात्रा के लिए सभी लालायित थे और बहुत मजबूरी की हालत को छोड़कर रुकने की किसी की भी इच्छा नही थी। मन की दुविधा दूर होते ही यात्रा की तैयारी उमग से होने लगी।

: ५ :

तैयारी और प्रस्थान

श्री श्यामलालभाई सारा सामान इकट्ठा करने मे लगे थे। उन्होने सामान लेने मे बराबर इस बात का ध्यान रक्खा कि भले ही कुछ ज्यादा हो जाय, पर कम कोई भी चीज न पडने पाये। व्यवस्था जब उनके हाथ मे थी तो हमे सामान की कोताई के कारण किसी प्रकारकी असुविधा होना उनके लिए अच्छी बात नही है, यह सावधानी उनके मन मे बराबर बनी थी। उन्होने कुछ सामान खरीदा, कुछ किराये पर लिया, कुछ अपने यहा से दिया। रात को नौ-दस बजे तक बहुत थोडी चीजो को छोडकर शेष सब सामान हमारे कमरे मे आ गया। गाधी-आश्रम से सबने गरम मोजे खरीदे, विट्ठलजी और सुधीर ने सिर और कानो को ढकने वाले टोपे, अन्नदा ने मफलर और मालक और मार्तण्डजी ने सिर पर पहनने की गरम टोपिया ली, जो खीचकर कानो तक आ जाती थी। कधो पर लटकाने वाले दो झोले सिलवाये। टेलर-मास्टर बच्चो की पतलूनें तैयार करने मे जुटे थे।

शाम को हमारे पडौस के कमरे के लोग अमरनाथ से लौटे। हमे मालूम हुआ तो उनसे प्रश्नो की झडी लगादी। उन्होने बताया कि यात्रा कठिन नही है। थोडा पानी जरूर पड गया था, लेकिन रास्ता साफ है। कोई डर नही है।

सारा सामान जुटाकर हम लोग रात को सोने को हुए तो

श्यामलालभाई आये। उन्होने कहा कि सामान तो सव आ गया, लेकिन कल जाने वाले यात्री अधिक होने के कारण टट्टू महगे मिले है, सवारी के कोई १७॥)फी टट्टू और लद्दू भी कुछ इसी हिसाव से। पहले अन्दाज था कि नौ-नौ, दस-दस रुपये मे हो जायगे। जो हो, अव सोचने का मौका न था। उसी समय काशीनाथ पडा आये। उन्होने वताया कि विष्णुजी की पार्टी ११वजे रवाना हो रही है और वे लोग चाहते है कि हम लोग भी साथ ही चले। उन्होने यह भी वताया कि वे लोग रात चंदनवाड़ी से आगे जोजपाल मे विताना चाहते है, जिससे १२ मील रास्ता पार हो जाय, अगले दिन के लिए कुल वारह मील चलने को रह जायं और फिर धीरे-धीरे शेष चार मील तय करके तीसरे दिन अमरनाथ पहुचे, पूर्णिमा को। वैसे यात्रा दो ही दिन मे हो जाती है और लोग दूसरे दिन ही अमरनाथ के दर्शन कर लेते है, लेकिन हम लोग मजे-मजे मे यात्रा करे, ऐसी उनकी इच्छा थी।

हमे इसमे भला क्या आपत्ति हो सकती थी! हमने जोज-पाल मे ठहरने की वात मान ली, लेकिन उनसे कह दिया कि हम कुछ जल्दी ही रवाना होकर पहले पडाव चदनवाड़ी मे मिल जायगे।

सवेरे जल्दी उठे। निवृत्त हुए, नहाये-धोये, विस्तर वांधे, सामान कुछ पेटी मे रक्खा, कुछ वोरी मे डाला। सुधीर रात को खूव सोया था। उसकी तवीयत अपेक्षाकृत ठीक लगी, फिर भी जुकाम साफ नही हुआ था। टेलर-मास्टर ने सारी रात जगकर दोनो की पतलूने तैयार कर दी थी। वच्चो ने पहनी तो विल्कुल ठीक वैठी। सिलाई काफी अच्छी हुई थी।

खाने-पीने का कुछ सामान जो वाकी रह गया था वाजार से खरीदा और सव चीजो को जमाया।

कुछ यात्री वड़े तड़के निकल गये थे, कुछ जाने के लिए

तैयार खडे थे। हम लोगो ने भी श्यामलालभाई से कहकर टट्टू मगवाये। जिस समय सामान निकाल कर कमरे के वाहर वरामदे मे रख रहे थे, देखते क्या है कि बाहर वडा शोर मच रहा है। बाहर जाकर देखा तो वडा विचित्र दृश्य सामने आया। एक अधेड उम्र के सज्जन रात की पोशाक पहने एक टट्टू की लगाम पकडे अपनी ओर खीच रहे थे और उसी टट्टू की लगाम को पकडकर श्यामलालभाई दूसरी ओर खीच रहे थे। दोनो वडे तेज हो रहे थे। पूछने पर मालूम हुआ कि झगडे की जड टट्टू है। उन सज्जन का कहना था कि उन्होने ५०) पेशगी देकर उस तथा अन्य टट्टुओ को अपनी पार्टी के लिए तय कर रक्खा है। श्यामलालभाई का कहना था कि ये टट्टू हमारे लिए है। विट्ठलजी और मैने बीच मे पडकर मामला शात करना चाहा, लेकिन बात सुलझी नही। तब यह तय हुआ कि टूरिस्ट ब्यूरो के अधिकारी के पास पहुच कर रास्ता निकाला जाय। अधिकारी को बुलाया। वह आये और उन्होने आते ही न कुछ पूछा, न जाचा और फैसला सुना दिया कि टट्टू उन सज्जन को दे दिये जाय। इस पर मार्तण्डजी को गुस्सा आ गया। उन्होने उनसे कुछ सख्त-सुस्त कह दिया। सरकारी अधिकारी भला रैयत की गरमी कैसे सहन करते! वे दुगने गरम हुए, लेकिन किसी प्रकार हम लोगो ने उन्हे शात किया। सारी बात जब उन अधिकारी महाशय को समझाई गई तब उनकी अक्ल मे आया कि उनका फैसला जल्दी मे हुआ था। फिर तो उन्होने दोनो पार्टियो के लिए टट्टू का प्रबन्ध करने का आश्वासन दिया और हमारी पार्टी को श्यामलालभाई द्वारा तय किये गए टट्टू मिल गये।

सामान तयार था ही, टट्टू वाले अब उसे अपने हिसाब से बाँधने लगे। हमारे पास आठ सवारी के टट्टू थे और चार लद्दू। चूकि जोजपाल मे ठहरने के लिए कोई बनी-बनाई जगह न थी, केवल सपाट मैदान था, इसलिए सोचा कि एक तम्बू भी

साथ ले जाना चाहिए । अब समस्या सामने आई कि उसे ले जाने के लिए और टट्टू कहा से आवेगा ? लेकिन श्यामलालभाई ने अपनी चिरपरिचित मुस्कान के साथ कहा, "आप फिक्र न करे। बन्दोबस्त हो जायगा ।"

सामान लदते-लदाते १० बज गये । अब प्रतीक्षा थी तम्बू के टट्टू की । आधा घटा और राह देखी । फिर भी समाचार न आया तो मार्तण्डजी और मैं पीछे रह गये, शेष पार्टी टट्टुओ पर सवार हो गई और भगवान का नाम लेकर विदा हुई ।

पार्टी को विदा करके हम दोनो थोडा नाश्ता करने और समय काटने के लिए एक होटल मे चले गये । नाश्ता शुरू ही किया था कि श्यामलाल भाई सामने से आते दिखाई दिये । उन्होने बताया कि तम्बू का प्रबन्ध हो गया है और वह विष्णुजी की पार्टी के साथ रहेगा । चिंता दूर हुई और हम लोग भी अपने-अपने टट्टुओ पर सवार होकर चल दिये । हमारी इच्छा थी कि अमरनाथ की यात्रा से लौटने पर होटल के बजाय नदी के किनारे तम्बू मे ठहरा जाय । अत चलते-चलते हमने श्यामलाल-भाई से १३ सितम्बर को नदी के किनारे एक तम्बू लगवा रखने के लिए कहा । उन्होंने तत्काल उत्तर दिया, "आप बेफिकर रहिये । लौटने पर सबकुछ तैयार मिलेगा। "

काफी यात्री अमरनाथ की यात्रा पर आज जा रहे थे । हमने हिसाब लगाया तो पता चला कि आज की यात्रा मे देश के अनेक भागो का प्रतिनिधित्व हो गया था । गुजरात, बगाल, मद्रास, दिल्ली, मालवा, राजस्थान, अजमेर, उत्तर प्रदेश, पजाब, आदि भागो के लोग थे और इस प्रकार यह यात्री-दल अखिल भारतीय बन गया था ।

उस दिन शुक्रवार था, भाद्रपद शुक्ल १३ । हम लोग रवाना हुए उस समय बादल सूर्य से इधर-उधर हो गये थे और चिलचिलाती धूप निकल आई थी । मन-ही-मन सूर्य-देवता को

प्रणाम किया और टट्टुओ पर सवार होकर चल दिये । कुछ टट्टू वाले सामान के साथ चले गये थे, कुछ सवारी के टट्टुओं के साथ। गुलाम नवी हम दो के टट्टुओ को सभालने के लिए रह गया था। वह हमारे साथ चला।

टट्टुओ के जमादार का नाम मुहम्मद रमजान था,जो हमारी टोली के साथ चला गया था। गुलामनवी ने वताया कि सव टट्टुओ के अलग-अलग नाम है। मार्तण्डजी के टट्टू का नाम गुलावा था, मेरे का वुलवुल, आदर्श के टट्टू का नाम भी वुलवुल था, भाभी का वहादुर, मालक का कस्तूडा, अन्नदा का पवन, विट्ठलजी का गुरक और सुधीर का लालवहादुर। टट्टुओ पर सवार होते ही हम लोगो ने एड लगाई और जरा तेज चलाया कि शेप पार्टी को पकड ले, पर गुलामनवी ने कहा, "धीरे-धीरे चलाइये। अभी तो सारा सफर सामने है। भगाने से घोडे थक जायगे।"

: ६ :

वार्षिक यात्रा

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, अमरनाथ की वार्षिक यात्रा श्रावण मास, यानी अगस्त मे होती है। भारत के विभिन्न भागो से लोग आ-आकर श्रीनगर के दशनामी अखाडे पर इकट्ठे हो जाते है और श्रावण की अमावस्या के दिन यात्रा प्रारम्भ होती है। दूर-दूर के यात्री, साधु-महात्मा, भजनीक, उपदेशक सब मिलकर वडे उत्साह से भजन-कीर्तन करते है, उपदेश होते है और चौथे दिन यात्री-दल वहा से चल पडता है। यात्रा के आगे-आगे भैरोजी का पुजारी छडी लेकर चलता है। छडी दशनामी अखाडे मे रक्खी रहती है और इस विशेष अवसर पर काम आती है। वह महादेवजी के चिन्ह-स्वरूप होती है। कहते

है, इसकी पूजा काश्मीर सरकार की ओर से होती है। उस पर एक सौ ग्यारह रुपये और सोने का यज्ञोपवीत भेट चढाया जाता है। सारा यात्री-दल उत्साह और आनन्द से ओतप्रोत होता है। कभी वे भजन गाते है तो कभी शकर, शभु आदि के जयघोष करते है। दिन मे लगभग आठ-दस मील चलकर पडाव पर ठहर जाते है, भोजन बनाते है, खाते-पीते है। पहलगाम तक भोजन और निवास का कोई कष्ट नही होता। ठहरने के लिए सुव्यवस्थित पडाव है, लेकिन पहलगाम के बाद अपना प्रबन्ध स्वय करना पडता है। बहुत से यात्री मोटर-लारियो से पहलगाम पहुच जाते है और वहा से दल मे शामिल हो जाते है।

यात्रा श्रावण सुदी चौथ को श्रीनगर से चलकर रास्ते मे ठहरती हुई षष्ठी को अनन्तनाग और सप्तमी को मटन पहुचती है। अनन्तनाग पहाड की तलहटी मे बसा है और काश्मीर मे दूसरी श्रेणी का नगर है। मुसलमान इसे इसलामाबाद भी कहते है। यहा पर अनेक झरने है। काश्मीरी कला-कौशल का अच्छा काम होता है। यहा के प्रसिद्ध झरने का नाम 'मलखनाग' है। यहा पर दो कुण्ड है। एक कुण्ड के बीच मे मदिर दूसरे मे शिवलिग है। दोनो कुडो का पानी कारीगरी से युक्त एक पत्थर पर होकर प्रपात के रूप मे कलकल निनाद करता हुआ गिरता है। एक ओर को गधक का झरना है। श्रीनगर से यह स्थान ३६ मील है। सड़क अच्छी है। यहा आने के रास्ते मे पामपुर, अवन्तीपुर, मटन आदि स्थान पडते है।

यात्रा एक दिन मटन मे ठहर कर नवमी के दिन ऐशमुकाम पहुचती है और दशमी को पहलगाम। पहलगाम से एक मील आगे उसके ठहरने का स्थान है। वहा से लोग टट्टुओ पर या डाडी मे जाते है। यात्रा के समय बहुत से लोग पैदल भी जाते है। यहा से आगे का वर्णन हम आगे के अध्यायो मे विस्तार से करेगे। रास्ते मे कई स्थानो पर पडाव डालते हुए यात्रा पूर्णिमा

को अमरनाथ पहुचती है और वहा शिव, पार्वती और गणेश के दर्शन करती है। उस दिन शिवलिंग पूरे आकार मे होता है और पार्वती और गणेश की मूर्तिया भी बडी भव्य दिखाई देती है। बाद मे बर्फ पिघलने लगती है और यात्रियो का यद्यपि आना-जाना होता ही रहता है, तथापि उस रूप मे उनके दर्शन नही होते, जिस रूप मे पूर्णिमा को होते है।

यात्रा के समय कश्मीर राज्य की ओर से ठहरने, सुरक्षा, दवा-दारू आदि की व्यवस्था हो जाती है। यात्रा के साथ जाने मे अपना आनन्द है। धार्मिक व्यक्तियो को उसी के साथ जाना चाहिए। खूब चहल-पहल, भजनकीर्तन, उपदेश आदि का लाभ सहज ही मिल जाता है। श्रद्धा-भक्ति मे डूबे हजारो नर-नारियो मे भगवान के दर्शन हो जाते है, लेकिन जिन्हे यात्रा का वास्तविक आनद लेना है, उन्हे मेले से पहले या बाद मे जाना चाहिए। मेले के समय एक तो गदगी बहुत हो जाती है, दूसरे कोलाहल इतना अधिक होता है कि आदमी उसमे खो जाता है, स्वतन्त्र रूप से चिन्तन या प्रकृति का निरीक्षण नही कर सकता। सारा रास्ता इतना सुन्दर है, इतना भव्य है कि प्रकृति-प्रेमी को पग-पग पर बडी मूल्यवान् सामग्री प्राप्त होती है। प्रकृति की छटा को देखकर वह मुग्ध रह जाता है। प्रकृति के इस मनोहारी रूप की झाकी भीड मे नही ली जा सकती।

यात्रा के समय पहलगाम मे टट्टू, डाडी आदि सब मिल जाते है, लेकिन माग अधिक होने के कारण महगे मिलते है। सरकारी दर सवारी के टट्टू की फी टट्टू १७॥) और लद्दू की १५) रुपये है, डाडी ८५)।

खाने की व्यवस्था यात्रियो को स्वय करनी होती है। चदन-वाड़ी पर कुछ दुकाने है। उससे आगे कुछ भी नही मिलता।

: ७ :

पहला पड़ाव

अपने-अपने टट्टू पर सवार होकर हम आगे बढे तो कुछ ही कदम पर सडक के किनारे एक तख्ती लगी मिली, जिस पर लिखा था

पहलगाम	० मील
चदनवाडी	८ मील
वायुजन	१६ मील
पचतरणी	२४ मील
अमरनाथ की गुफा	२८ मील
पहलगाम	५७०० फुट

तख्ती पर सरसरी निगाह डालकर आग बढ चले। अपनी पार्टी के साथ मिल जाने की जल्दी जो थी। लगभग एक मील चलने पर पुराने पहलगाम गाव की थोडे-से घरो की बस्ती मिली। वही लद्दू टट्टू और टोली के लोग खडे थे। मालक का चेहरा खिला हुआ था। सुधीर की ओर से अब भी डर बना था, लेकिन अपने लालबहादुर को उसने सबसे आगे कर लिया था, जो अमरनाथ तक आने-जाने मे बराबर आगे रहा। सबसे अधिक शैतान मार्तंडजी का टट्टू था। उसके बराबर जब कोई दूसरा टट्टू आ जाता तो वह कान खडे करता और गर्दन टेढी करके दात निकालकर ऐसा मुह मारता कि यदि दूसरा सवार सावधान न होता तो वह स्वय या उसका टट्टू जरूर चोट खा जाता। गुलाबा की यह आदत अत तक नही छूटी।

पहलगाम बडा सुन्दर है, लेकिन आगे का रास्ता देखकर हम लोग पहलगाम को भूल गये। पहलगाम से निकलते ही लिदर नदी साथ हो गई थी और जैसे-जैसे हम आगे बढते गये,

उसका रूप निरतर निखरता गया । ऐसे दृश्य प्राय कम देखने मे आते है । पहाड के वक्ष पर पतली सापिन की तरह बल खाती पगडडी जाती है। बाई ओर ऊचे पर्वत, जिन पर हरियाली का नाम नही, दाई ओर तेजी से बहती हुई लिदर नदी, जिसके दोनो तटो पर ही नही, ऊपर उचाई तक चीड, बदलू, अखरोट, जाम, कजिल, बुरिंग, ब्राडी, कुलमाछ आदि के हरे-भरे गगन-चुम्बी वृक्ष । पुराने पहलगाम के निकट सफेदे के पेड मिले थे, लेकिन ज्यो-ज्यो आगे बढते गये, उनका स्थान दूसरे पेड लेते गये । बडा विचित्र दृश्य था । एक ओर देखो तो सपाट पहाड, दूसरी ओर देखो तो विलक्षण हरियाली, पीछे देखो तो ऐसे दृश्य, मानो कोई चित्र देख रहे हो । बीच-बीच मे मक्की के खेत ऐसे जान पडते थे जैसे किसी ने सीढिया बना दी हो। वैसे काश्मीर का मुख्य भोजन चावल है और बनिहाल की घाटी से श्रीनगर तक शाली के लहलहाते खेत देख कर हृदय उछल पडा था, लेकिन यहा मक्की के खेत थे, जिनकी रखवाली के लिए यत्र-तत्र इक्की-दुक्की झोपडिया पडी हुई थी । आश्चर्य होता था कि उस निर्जन स्थान मे चार-छ व्यक्ति किस प्रेरणा से अपने जीवन के लम्बे वर्ष बिता देते है । उनके छोटे-छोटे खिलौनो जैसे बच्चे यात्रियो को देखते ही दौडे आते है और हाथ फैलाकर कहते है, "सेठ साब, पैसा दो ।" उनकी प्यारी सूरत और स्वस्थ शरीर को देख कर जहा हर्ष होता है, वहा उनकी मागने की वृत्ति पर क्षोभ भी होता है । इसमे दोष, वास्तव मे, बच्चो का नही है, उन व्यक्तियो का है, जिन्होने उन्हे पैसे दे-देकर भिखारी बना दिया है ।

हम लोगो के टट्टुओ को देख कर दो नन्ही-नन्ही बालिकाए दौडी आई और आदत के अनुसार उन्होने हाथ फैला दिये । उनके चेहरे फूल-से खिले थे, सेब जैसे सुर्ख, लेकिन कपडे निहायत गदे । सिर के अग्र भाग मे बालो की पतली-पतली इतनी वेणिया गुथी थी कि देखकर आश्चर्य होता था । पता नही, उनके तैयार करने मे कितना समय लगता होगा । उनके शरीर के भीतरी

गदे कपडो के ऊपर लम्बे चुगे जैसी फिरन थी, लेकिन वयस्क युवतिया अथवा बडी उम्र की महिलाओ जैसे आभूषण न थे। वे पैसे के लिए रट लगाए हुए थी। हम लोग देर तक उनकी ओर देखते रहे, फिर मैंने कहा, "भागो मत।" मन को बडा बुरा लगा। इतनी उचाई पर प्रकृति के अलौकिक सौदर्य के बीच, मानव का याचक रूप हृदय पर बडी चोट करता था। पैसे देने की जगह यदि यात्री इन बच्चो के लिए कोई ऐसी चीजे ले जाय तो अधिक अच्छा हो, जिनसे उनके ज्ञान मे वृद्धि हो और उनका स्तर ऊचा उठाने मे सहायता मिले, लेकिन इतनी दूरदर्शिता कितनो मे है ?

हम लोगो ने नदी का पहला काठ का पुल पार किया तो अच्छा लगा, लेकिन उससे कुछ आगे निकल कर जब हमारा सकीर्ण मार्ग ऊचे-से-ऊचा होता गया और कही-कही पर खतरे-भरे ढाल आगे लगे तो रोमाच के साथ-साथ भय भी उत्पन्न होने लगा। हम लोगो मे से कई जने ऐसे थे, जिन्होने कभी चार कदम भी घोडे की सवारी पहले नही की थी, शायद एक-दो जनो ने विशेषकर बच्चो ने तो घोडे की पीठ पर कभी पैर भी नही रक्खा था। इसलिए कभी-कभी विचार उठता था कि इतनी लम्बी यात्रा कर भी पायगे या नही, लेकिन उत्साह सबमे अपार था। जब कोई नया प्राकृतिक दृश्य आता था या झरना पहाड की गोद मे दूध की भाति बहता दीख पडता था तो हमारी पार्टी मे से कोई-न-कोई चिल्लाकर सारी टोली का ध्यान उसकी ओर आकर्षित कर देता था।

नदी बीच मे थोडी देर को बिछुड गई थी, फिर साथ हो गई और चदनवाडी तक बराबर साथ गई। रास्ते मे कही मिट्टी के पहाड पडते थे, जिन पर चलने मे धूल उडती थी तो कही बडे-बडे पत्थर लाघने पडते थे और कही ऐसी सपाट चढाई आती थी कि ढालू रास्ते पर टट्टुओ के पैर उखड जाने की आशका

होती थी । मन वार-वार नई-नई परिस्थितियो और दृश्यो से गुजरता था और उसकी स्थिति वाहरी स्थितियो के अनुसार कभी कुछ, कभी कुछ होती थी ।

चदनवाडी पहलगाम से कुल आठ मील है । रास्ता सचमुच रोमाचकारी है । पहलगाम से प्राय लोग यहा पिकनिक के लिए जाते हैं । जो अमरनाथ नही जा पाते, वे भी चदनवाडी तक तो हो ही जाते है । रास्ते मे हमे अनेक व्यक्ति वहा जाते हुए मिले । उनमें पुरुप, स्त्रिया, वच्चे सभी थे ।

रास्ता इतना सकरा है कि दो घोडे विना खतरे के साथ नही जा सकते । कभी-कभी हमारे टट्टू एक-दूसरे से रगड जाते थे, तव नीचे की ओर देखकर हृदय काप उठता था । वैसे मौत सव जगह ही रहती है, लेकिन वहा पर तो उसके दोनो हाथ हर घडी फैले रहते हैं । रास्ते से नदी तक के पहाड इतने सपाट है कि जरा चूके कि नीचे गये, इतने नीचे कि जहा हड्डी-पसली कुछ भी न वचे । चीड और देवदार यहा की शोभा है और कुलमाछ तथा जाम अपनी हरियाली से दर्शको का मन हरा कर देते हैं ।

प्रकृति के पक्षपात की ओर लक्ष करते हुए मैंने मुहम्मद रमजान से पूछा, "क्यो भई, यह क्या मामला है कि एक तरफके पहाड तो इतने रूखे-सूखे है और दूसरी तरफ के इतने हरे-भरे ?"

उसने वताया कि वहा हवा इस तरह चलती है कि इन रूखे पहाडो पर जो कुछ होता है, उसे उडाकर नीचे घाटी मे ले जाती है और घाटी मे से पहाडो पर । यही वजह है कि इधर से उडकर जाने वाली चीजे नदी के किनारो पर और उधर के पहाडो पर जम जाती है । उसकी वात मे सचाई मालूम हुई ।

हम लोग साथ-साथ चलने का प्रयत्न करते थे, लेकिन कभी-कभी एक दूसरे से पिछड जाते थे या आगे निकल जाते थे ।

तब मै चिल्लाकर कहता, "मालक, हाऊ आर यू ?" (क्या हालचाल है, मालक ?)

तत्काल मालक की आवाज आती, "क्वाइट वैल।" (बिल्कुल ठीक।)

यही वात कभी भाभी से पूछता तो वह कहती, "मै नही जानती तुम्हारी अंग्रेजी।" और यह वह कुछ ऐसे ढग से कहती कि हम सब हँस पडते।

कही-कही रास्ता बहुत भयावना होता तो मै गुलाम नवी या दूसरे आदमी से कहता कि वह आगे चला जाय और सुधीर के टट्टू को सभाल ले, लेकिन सुधीर उसे झिडक देता। यही हाल दूसरे लोगो का था। सब-के-सब बहादुर सवार निकले और दो-एक स्थानो पर दो-एक व्यक्तियो को छोड़ कर किसी ने भी टट्टू वालो की सहायता नही ली।

पहलगाम मे सवेरे घूमते हुए हमे पहाड की चोटियो पर पहले-पहल वर्फ दिखाई दी थी तो हम लोग बड़े प्रसन्न हुए थे, लेकिन यहा तो जगह-जगह पर झरने जमे हुए और पहाड वर्फ से ढके हुए दिखाई देते थे। दूर पहाड पर झरने की जमी हुई लकीर ऐसी जान पडती थी, मानों किसी ने कलई से एक लम्वी रेखा खीच दी हो। कही-कही से वर्फ के नीचे पानी की पतली धारा बहती दीख पडती थी। प्रकृति की विचित्र कारीगरी थी। उसे देख कर मन अघाता नही था, फूलता था और झूमता था। नीरस व्यक्ति के मुह से भी यह फूट उठना स्वाभाविक था कि प्रकृति ने सचमुच यहा गजब किया है।

पहलगाम से चदनवाडी तक के सारे रास्ते का यही हाल है। पर्वत, नदी और वृक्ष, जहा यात्री को पुलकित करते है, वहां मानव की कृति उन्हें चमत्कृत कर देती है। कैसे दुर्गम पर्वत को चीर कर उसने रास्ता निकाला है, जिस पर चलकर वर्षो से हजारो नर-नारी प्रकृति के अलौकिक सौदर्य-स्रोत से अमृत-

तुल्य रस ग्रहण कर अपनी आत्मा को तृप्त करते है।

चदनवाडी की उचाई समुद्र-तट से ९५०० फुट है। ज्यो-ज्यो ऊपर चढते जाते है, एक-से-एक वढकर दृश्य आते जाते है। आठ मील का रास्ता योही कट जाता है। लिदर नदी जो पहलगाम से वाहर आकर शेषनाग नदी कहलाने लगती है, सच-मुच नाग-सी लहराती साथ चलती है।

चदनवाडी का नाम कैसे पडा, यह ठीक से पता नही चलता। सभवत किसी समय वहा चदन के कुछ पेड रहे होगे, लेकिन अव तो वहा एक भी चदन का पेड नही है। घने-घने ऊचे वृक्ष है, झरने है और थोडी-सी समतल भूमि है। अमरनाथ जाने वाले यात्री प्राय आते-जाते रास्ते मे रात को यही ठहर जाते है।

पहलगाम से चदनवाडी तक मोटर की सडक वन रही है। शायद सालभर मे वन जायगी। तव मोटर मे वैठे कि झट चदन-वाडी पहुँचे। फुरसत के रास्ते का सौदर्य देखने और उसका आनद लूटने की फिर किसे सुविधा होगी! वस्तुत ऐसे स्थानो की महिमा तभी देखी जा सकती है जब कि वहा की यात्रा पैदल या टट्टुओ पर की जाय। त्वरित साधन तो आतरिक एव बाह्य शाति को भग करते है और प्रकृति के साथ निकट का सबध स्थापित नही होने देते।

चदनवाडी हम लोग डेढ बजे पहुचे। वहा फिर एक काठ का पुल पार करना पडा।

चदनवाडी छोटी-सी बस्ती है। कुछ लकडी और टीन के घर बने है, जिनमे यात्री रात को ठहरते है। कुछ दुकाने है। एक पजाबी होटल है। जवतक शीत और बर्फ के कारण यहा आना-जाना असभव नही हो जाता तबतक खूब चहल-पहल रहती है। लोग बरावर आते-जाते है और दिनभर यहा प्रकृति की गोद मे खेलकर लौट जाते है। जिस समय हम लोग वहा पहुचे, काफी लोग आये हुए थे। कोई टोली कही बैठी थी, कोई कही। चारो ओर

चहल-पहल थी, झरने का निनाद था, मीठी-मीठी धूप थी। तबीयत खुश हो गई।

होटल के सरदारजी गरम-गरम फुलके तैयार कर रहे थे। हम लोग पहलगाम से कुछ खा-पीकर चले थे, लेकिन आठ मील की चढाई ने सारा खाया-पीया हजम कर डाला। रोटिया अच्छी तरह सिकवाई। छककर भोजन किया।

खाना खाकर कुछ देर सुस्ताने के लिए हमारी पार्टी एक ओर झरने के किनारे घास पर लेट गई। हम लोगो को मालूम हुआ कि लगभग एक फर्लांग पर वर्फ का पुल है। विट्ठलजी और मै उसे देखने गये। देखा तो आश्चर्य-चकित रह गये। यहा-से-वहा तक वर्फ-ही-वर्फ थी और उसके नीचे नदी की धारा इस प्रकार वह रही थी, जैसे उसके ऊपर कोई भार ही न हो। हम लोग देर तक उसे देखते रहे। दो वगाली युवतिया, जिनमे से एक पतलून पहने हुए थी, पुल को देख रही थी। कुछ और भी लोग थे। मैने लकडी का एक टुकडा उठाकर वर्फ मे मारा। एक वडा-सा ढेला टूट कर गिर पडा। उसे फिर तोडा और उठा सकने योग्य वना कर लेकर चल दिये। जव अपनी पार्टी के पास आये तो वहा एक भोला-भाला युवक मिला। उम्र कोई २० वर्ष की होगी। मैने विनोद मे, साथ ही गभीर स्वर मे, उसे सुनाते हुए कहा, "देखो तो, चालाक दुकानदार ने इस जरा-सी वर्फ के साढे तीन आने ले लिये!"

युवक झट वोल पडा, "अरे, आपने पैसे क्यो दिये? यहा पास मे ही वर्फ का पुल है। ढेरो वर्फ योही ले आइये।"

मैने उसी प्रकार गभीरता से पूछा, "पुल कहा है?"

"यह रहा, दो कदम पर। चलिये, मै साथ चलता हू।"

युवक के भोले स्वभाव पर हमे हसी आ गई। वह समझ गया कि हम लोग उसे वना रहे है।

थोडी देर मे विष्णुजी की पार्टी भी आ गई। उन्होने कुछ

खाया-पीया, और विश्राम किया । इतने मे हम लोग फिर चलने को तैयार हो गये । यह तय हो ही गया था कि हमारी और विष्णुजी की टोलियाँ जोजपाल मे साथ-साथ ठहरेंगी, इस लिए बिना उनकी प्रतीक्षा किये हम लोग चदनवाडी से कोई ३–३।। बजे चल पडे । जोजपाल यहा से करीब ४ मील था ।

: ८ :

चंदनवाड़ी से जोजपाल

हम लोग चदनवाडी से आगे की यात्रा पर रवाना हुए तो काफी लोग चदनवाडी से पहलगाम को लौट रहे थे । कुछ निश्चित इधर-उधर घूम रहे थे । थोडी देर मे सब लौट जाने वाले थे । अमरनाथ के लिए रवाना होने वाली हमारी टोली मे हमी आठ जने थे । पहला पडाव सकुशल पार हो गया । अच्छे दृश्य मिले, अच्छा भोजन मिला, अच्छा साथ था, सबका मन प्रसन्न था ।

थोडी दूर चलते ही वह बर्फ का पुल दिखाई दिया, जिसका जिक्र ऊपर आ चुका है । इस यात्रा में इतनी बर्फ को निकट से देखने का यह पहला अवसर था । सबको बडी प्रसन्नता हुई । अब-तक वृक्ष, नदी, प्रपात आदि के दृश्य देखते आये थे । इसलिए इस नये प्रकार के दृश्य को देखकर हृदय मे बडी गुदगुदी-सी हुई ।

शेषनाग नदी फिर साथ हो गई । थोडी दूर उसके किनारे-किनारे चले । उसके बाद एक घाटी पार करनी पडी, जिसने सारा खाया-पीया निकाल दिया । यह 'जुआघाटी' कहलाती है । इसके बाद दूसरी घाटी आती है, जिसे 'पिस्सू घाटी' कहते है । जिस प्रकार जुए और पिस्सू आदमी को हैरान करते है, उसी

प्रकार ये दोनो घाटिया यात्रियो को बडा कष्ट पहुचाती है। दोनो घाटिया लगभग एक-एक मील की है और रास्ता बहुत ही ऊबड-खाबड, सकीर्ण और चक्करदार है। सामने उचाई और पीछे निचाई इतनी कि देखकर एकबारगी दिल बैठने लगता है।

भाभी को टट्टू पर रहम आया। उन्होने निश्चय किया कि घाटी को पैदल पार करेगी। वह टट्टू से उतर पडी। मैने कहा कि घाटी कठिन है, नही चला जायगा, पर वह न मानी। रमजान ने कहा, "आप चुप रहे। थोडी देर मे अपने आप इनको चढना पडेगा।" उसकी बात ठीक निकली। कुछ दूर चलने पर भाभी को इरादा बदलना पडा और फिर टट्टू पर सवार हो गई। वास्तव मे चढाई बडी भयकर थी। हम लोग थोडे-थोडे फासले पर थे और बच्चो की तरह अपने हर्ष को व्यक्त करते हुए एक-दूसरे को पुकारते थे। सुधीर सब से आगे था और चढाई इस तरह पार कर रहा था, मानो पर्वतारोहण ही उसका धधा हो। टट्टू वाले बताते जाते थे कि हमे कहा पहुचना है। कुछ देर हम ऊपर देखते और फिर जरा पीछे निगाह डालते। दस-दस कदम पर टट्टुओ को सास लेने के लिए रोकना पडता। टट्टू ऐसे हाफते थे, जैसे धौकनी चल रही हो। इस प्रकार चलते और मुकाम करते-करते हम लोग आगे बढे। टट्टू वालो ने जब बताया कि हम लोग आधा रास्ता पार कर चुके है तो कुछ-कुछ चैन की सास ली। आधी मजिल अभी शेष थी। पीछे देखा तो विष्णुजी की पार्टी आती दिखाई दी। ऐसा मालूम होता था, मानो पतली लकीर जैसी पगडडी पर कोई चीटी के बराबर वस्तु रेग रही है। थोडा सुस्ताने के बाद हमारी टोली की कूच फिर शुरू हुई।

टट्टू वाले बराबर टट्टुओ को सावधान करने के लिए अपनी पारिभाषिक शब्दावली मे कहते थे, "ओश-खबरदार!" पूछने पर मालूम हुआ कि 'ओश' का अर्थ है 'होशियार'। हम

लोगो ने भी यह शब्द याद कर लिया और आगे चलकर उसका प्रयोग टट्टू-वालो से भी अधिक करने लगे ।

पहलगाम मे इन मरियल टट्टुओ को देख कर आशका हुई थी कि कैसे इतने बीहड रास्ते को पार करेगे । उनकी टागे इतनी दुबली-पतली थी कि कही भी डगमगा सकती थी । रास्ते के बिल्कुल किनारे पर जब वे चलते थे तो शुरू-शुरू मे झुझलाहट होती थी कि क्यो वे बीच मे या पहाड की ओर नही चलते और क्यो अपनी और सवार की जान खतरे मे डालते हैं ? लेकिन जब जुआ और पिप्सू घाटिया पार हुई और हम लोग लगभग ११ हजार फुट की उचाई पर सही-सलामत पहुच गये तो इन टट्टुओ के प्रति हमारे मन मे प्रशसा और आत्मीयता के भाव उत्पन्न हो आये । क्या मजाल कि कोई टट्टू ठोकर खा जाय या गिर पडे ! क्या मजाल कि कोई टट्टू आपको धोखा दे जाय ! आप उस पर सधे बैठे रहिये और उसे अपने हिसाब से चलने दीजिये । लगाम मे झटका देने की जरूरत नही, अन्यथा आप उसकी एकाग्रता मे बाधा डालेगे । लगाम ढीली छोडकर चुपचाप सभले बैठे रहिये और चढाई आवे तो आगे को झुक जाइये, उतार हो तो रकाबो मे पैरो को तानकर पीछे को खिच जाइये । कभी धोखा नही खायगे ।

इन घाटियो मे चढाई तो अधिक है ही, लेकिन रास्ते में मोड-पर-मोड होने के कारण यात्रियो को बडी हैरानी होती है और कुछ का जी मिचलाने लगता है ।

सारी घाटी हरी-भरी है । बदलू, कुलमाछ और भोजपत्र के पेडो ने मार्ग की भयकरता को अद्भुत सौंदर्य प्रदान किया है ।

टट्टू वालो से हमे मालूम हुआ कि सन् १९२८ तक एक दूसरा रास्ता अमरनाथ को जाता था जो बडा ही खतरनाक था । उसमे कही भी ठहरने की व्यवस्था नही थी । दैवयोग से अगर

वारिश आ गई या ओले पड गये तो यात्रियो को बेहद कष्ट होता था। कहते है, १९२८ मे असाधारण रूप से वर्षा हुई, जिसके परिणाम-स्वरूप सैकडो यात्री मर गये। मरने वालो मे अधिकाश साधू-महात्मा और गरीब यात्री थे, जिनके पास शीत से वचने के लिए काफी कपडे न थे। इस घटना से काश्मीर-राज्य का ध्यान इस ओर विशेष रूप से गया। उसने उस भयकर रास्ते को बद करा दिया और यह नया रास्ता चालू किया, जिस पर हम यात्रा कर रहे थे। इसकी विस्तृत चर्चा हम आगे चलकर करेगे। सरकार ने नया रास्ता ही नही बनवाया, चदनवाडी, शेषनाग तथा पचतरणी के पडावो पर यात्रियो के ठहरने के लिए लकडी और टीन के घर भी बनवाये तथा मेले के दिनों मे अधिक-से-अधिक सुविधाओ की व्यवस्था की।

पिस्सूघाटी सकुशल पार करके हम लोग जब चोटी पर पहुचे और पीछे मुडकर देखा तो एक प्रकार की भयमिश्रित प्रसन्नता हुई। कठिनाइयो को पार करने पर जिस प्रकार लोग अपने जीवन मे प्राय विजय का उल्लास अनुभव करते है, वैसी ही मन स्थिति इस समय हम लोगो की थी।

ऊपर आकर टट्टुओ पर से उतर पडे और उन्हे थोडी देर विश्राम करने तथा चरने के लिए छोड कर, अपने पैर सीधे करने के विचार से, पैदल चल दिये। पहलगाम से टट्टू पर वैठे-वैठे, चढाई-उतराई पार करते-करते, टागे अकड-सी गई थी। पैदल चलना अच्छा लगा। धूप चारो ओर फैली थी। उचाई पर सर्दी कुछ वढ जाने के कारण वह बडी अच्छी लगी।

थोडा आगे निकलने पर फिर शेषनाग नदी आगई। जगह-जगह पर उसके ऊपर मोटी बर्फ जमी थी, जिसके नीचे जलधारा बहती थी। वरफ मटियाले रग की दीखती थी, लेकिन उसके किनारे चादी की तरह चमकते थे। वडा मनोहारी दृश्य था।

हम लोग ज्यो-ज्यो ऊचे चढते जाते थे, नदी की निचाई

नीची होती जाती थी और उसकी जलधारा नाले जैसी दिखाई देती थी। नीचे देखते डर लगता था। फिर भी हम आगे वढे जा रहे थे, वढे जा रहे थे। पिस्सू घाटी पार करते ही भाभी ने जोर से अमरनाथ की जय का नारा लगाया। उसके वाद अव तो पाच-पाच मिनट पर जय-जयकार होने लगा। सुधीर चिल्लाता था, "वोलो, अमरनाथ की ।" हम लोग कहते थे, "जय!" वह दो वार जयकार करता था और फिर अत मे कहता था, "आल राइट।" हम लोग हँस पडते थे। साथ अच्छा हो तो भारी-से-भारी यात्रा भी आसान लगती है। इस वात की पुष्टि यहा वहुत अच्छी तरह से हुई। इतने भयकर मार्ग को हम हँसते-हँसते पार कर आये। जरा भी भारी न पडा।

मुह मे डालने के लिए इलायची और कुछ लेमनचूस की गोलिया साथ थी। पानी की एक वोतल भी थी। वैसे पानी पीने के लिए कई जगह अच्छे चश्मे रास्ते मे मिल जाते थे।

पिस्सू घाटी पार करने के वाद से हरियाली कम होने लगी, वृक्षो की सख्या घटने लगी और दृश्यो के रूप मे परिवर्तन होने लगा। चदनवाडी तक की मुग्ध करने वाली वृक्षराजि का स्थान अव सूखे पहाड लेने लगे, हरियाली स्वप्नवत् होने लगी।

साप की तरह वलखाती नदी और उसीसे होड करते रास्ते की विभिन्न अदाओ को देखते हुए चार मील के रास्ते को साढ़े तीन घटे मे पार करके शाम को ६ वजे हम जोजपाल पहुचे। उस समय सूर्य-देवता पश्चिम मे पहुच चुके थे और अस्ताचल की ओर जाने की तैयारी मे थे।

जोजपाल चारो ओर से पहाडो से घिरा शेषनाग नदी के किनारे एक छोटा-सा मैदान है। पेड़ का नामो-निशान नही। मेले के समय की गदगी के अवशेष अव भी वहा विद्यमान थे। हम लोगो को वैसे वायुजन जाकर ठहरना चाहिए था, लेकिन हमे वताया गया था कि वायुजन की अपेक्षा जोजपाल मे हवा

और सर्दी कम होगी। इसलिए रात को जोजपाल मे ही तम्बू लगाकर ठहरना अधिक सुविधाजनक होगा। सामान अभी पीछे था और दूसरी पार्टी के आने मे देर थी।

जोजपाल के मैदान मे पहुच कर टट्टुओ से उतरे तो सर्दी के मारे हाथ ठिठुर रहे थे। चादर, ओवर कोट आदि की आवश्यकता अनुभव न होने के कारण सामान के साथ रख दिये थे। अब उनका अभाव खटका, पर कोई चारा न था। दूसरी पार्टी के एक आदमी ने पहले पहुच कर नदी के किनारे एक छोटी-सी गुफा मे आग जला ली थी। हम लोग वही चले गये। आग के चारो ओर बैठ कर तापने और बाते करने लगे। लकडियो के धुए से सारी गुफा भर गई। धुए से हम लोगो की आखे फूटी जाती थी, लेकिन बाहर सर्दी इतनी अधिक थी कि जबतक सामान न आजाय तबतक बाहर निकलने का साहस न होता था।

: ९ :

एक रोमांचकारी अनुभव

आधा घटे प्रतीक्षा करने के बाद दूसरी टोली आ गई और हम लोग बरबस गुफा से निकलकर बाहर आये। विष्णुजी उस टोली के नेता थे। उन सबके आ जाने से बडी प्रसन्नता हुई। ठडी हवा चल पडी थी। सब लोग जाडे के मारे काप रहे थे। सूर्य छिप चुका था और अधेरा धीरे-धीरे फैलता जा रहा था। साथ ही सर्दी भी बढती जा रही थी। आसमान मे एक ओर से कुछ काले-काले बादल घिरते दिखाई दे रहे थे। उन्हे देख-देखकर हम लोगो का मन किसी अज्ञात आशका से कापने लगा।

थोडी देर मे इधर सामान पहुचा और उधर आसमान से हल्की-हल्की बूदे पडने लगी। टट्टू वालो ने सामान उतारा और आनन-फानन मे तम्बू खड़े कर दिये। हम लोगो के पास केवल एक

तम्बू था, जिसमे आठ जनो के सोने की व्यवस्था करनी थी और उसी मे सामान भी जमाना था। नीचे घास की मोटी चटाइया बिछाकर बिस्तर लगाये और एक ओर को सामान रक्खा । दिन भर के थके थे। सोचा कि निवृत्त होकर थोडा-बहुत भोजन कर ले और जल्दी ही सो जाय, जिससे सुबह उठकर सूर्योदय तक तैयार होकर निकल पडे।

निवृत्त होने के लिए नीचे उतरकर नदी तक जाना पडा। जब पानी मे हाथ दिया तो बर्फ-सा ठण्डा था । ऐसा जान पडा, मानो उगलिया कट कर गिर गई हो। एक अगीठी मे थोडे से कोयले जलवाये और उस पर पानी गरम होने को रख दिया। भोजन करने बैठे। मार्तंडजी ने खाना नही खाया। उनके सिर मे दर्द हो रहा था। हमारा भोजन खत्म हुआ ही था कि पड-पड करता जोर का पानी आ गया। जिधर सामान रक्खा था, उधर तम्बू इकहरा था। इसलिए पानी छनछन कर अदर आने लगा। डर हुआ कि कही सामान न भीग जाय। और चीजो की तो उतनी चिंता नही थी, जितनी कि आटे और कोयलो की थी। बरसातिया मगाकर सामान पर डाली। यह सब कर रहे थे कि पानी के साथ जोर के ओले पडने लगे। तम्बू के ऊपर ओलो की पडपडाहट ऐसी प्रतीत होती थी, मानो ईंट-पत्थर गिर रहे हो। हम लोग सिमटे हुए अदर अपने-अपने बिस्तरो पर पडे थे। एक लालटेन टिमटिमाती जल रही थी। पानी के बचाव के लिए तम्बू को अच्छी तरह से बद कर लिया। एक तो उचाई फिर छोटी-सी जगह मे आठ जने, लालटेन का धुआ और ऊपर से ओले, सबका जी घुटने लगा। थोडी देर मे देखता क्या हू कि पानी मेरे बिस्तर के नीचे आने लगा। असल मे तम्बू के सहारे-सहारे एक नाली बना दी जाती है, जिससे पानी आवे तो उस नाली मे होकर निकल जाय। हमारा तम्बू खडा करने वालो ने जल्दी मे पुरानी बनी नाली का ध्यान नही रक्खा था। उसी नाली से होकर पानी अदर आने लगा। एक नई परेशानी सामने आ गई। यो किनारे

पर सबके बिस्तर भीग रहे थे, कारण कि तम्बू कुछ हद तक ही पानी को रोक सकता था, लेकिन जब बिस्तर के नीचे पानी आने लगा तब विशेष चिंता होने लगी। मेरे बिस्तर के नीचे से होकर वह नाली तंबू के अंदर आई थी। उसमें पानी भरा था, चटाई बिल्कुल भीग गई थी। निकलने का रास्ता न होने के कारण पानी और बढ़ता जा रहा था। एक नई हैरानी पैदा हो गई। एकाएक हममें से एक ने सोचा कि जिधर से नाली में पानी आ रहा है उधर से बिस्तर के नीचे बरसाती की रोक लगा दी जाय। रोक लगाई, पर उससे कितनी बचत हो सकती थी।

रात को बारह बजे तक यही स्थिति रही। पानी और ओले पड़ते रहे। हम लोग भगवान का नाम लेते कभी बैठते कभी लेट जाते। मार्तण्डजी के सिर में दर्द तो पहले से था ही, उन्हें सांस लेने में भी कुछ कठिनाई होने लगी, लेकिन वे चुपचाप पड़े रहे। उन्होंने कुछ कहा नहीं।

आधी रात के बाद जब ओले थमे और पानी बंद हुआ तो त्रयोदशी का चंद्रमा आकाश में चमकने लगा। बाहर से मार्तंडजी की आवाज आई कि जरा बाहर आकर देखिये, कैसा बढ़िया दृश्य है! तबीयत बड़ी गिरी-सी थी, दिनभर की टट्टू की सवारी और चढ़ाई की थकान के कारण देह टूट रही थी। अन्य-मनस्क भाव से बाहर आया। पर बाहर जो देखा उससे तबीयत खिल उठी, सारी थकान दूर हो गई। चांदनी छिटकी हुई थी और चारों ओर बिछी बर्फ चांदी-सी चमक रही थी। दूर-पास सबकुछ सफेद नजर आता था। तम्बू के चारों ओर बर्फ की मोटी-सी तह लगी थी। ऊपर से दूध-सी चांदनी छिटकी थी और शुभ्राकाश में गोलाकार चांद अपनी आभा खुले हाथों बिखेर रहा था। सप्तऋषि मुस्करा रहे थे। जीवन का वह अपूर्व अनुभव था। सब लोगों ने उठ-उठ कर वह अद्भुत दृश्य देखा।

ओले-पानी बद हो जाने पर विष्णुजी भी अपने तम्बू से बाहर निकल आये। वह भी परेशान थे, क्योकि इतने ओले और वर्षा का सामना करना होगा, इसकी कल्पना किसी ने भी नही की थी। उनका एक तम्बू हवा के जोर से उड गया था, कपडे भीग गये थ, खाना ठीक से नही बन पाया, न वे लोग कुछ खा ही सके थे। जो हुआ, उससे अधिक चिंता इस बात की होने लगी कि यही हाल रहा तो आगे की यात्रा कैसे पूरी होगी। एक भय मन मे समा गया।

विष्णुजी के पास दो तम्बू और दो रावटी थी। उन्होने कहा कि हम लोगो को एक तम्बू मे असुविधा हो तो कुछ लोग उनके तम्बू मे आ जाय, लेकिन इतनी रात मे सामान लेकर इधर-से-उधर जाना ठीक नही समझा और थकान के मारे हिम्मत भी नही थी इतनी उठा-धरी करने की। उनके प्रस्ताव के लिए धन्य-वाद दिया और शेष रात अपने तम्बू मे काल-कोठरी की भाति व्यतीत की। बिस्तर भीग गये थे और तम्बू मे इतनी जगह नही थी कि हम लोग पूरे पैर भी फैला लेते। नीद तो किसी को आई नही। रात्रि की नीरवता को चीरता शेषनाग नदी का स्वर निरतर सुनाई पड रहा था।

सबेरे उठे तो बर्फ काफी पिघल गई थी, फिर भी इधर-उधर अब भी बिखरी पडी थी। जिस बर्फ ने रात को हम लोगो के हृदय को भयाक्रात कर दिया था वही अब हमारे मनोरजन का साधन बन गई थी।

सर्दी इतनी अधिक थी कि हमारे दात बजते थे। नदी मे हाथमुह धोने गये तो ऐसा लगा कि हाथ गल गये। झट ओवरकोट की जेब मे डाल लिये, लेकिन कहा गरम होते थे!

अगीठी पर चाय के लिए पानी रख दिया और हम लोग बिस्तर बाधने लगे। इतने मे विष्णुजी की पत्नी ललिताबहन आई और उन्होने बताया कि विष्णुजी ने तो आगे जाने का इरादा

छोड़ दिया है और यही से वापस लौट जाना चाहते है। मैने पूछा, "आपकी क्या इच्छा है ?"

बोली, "हम लोग तो अमरनाथ जाना चाहते है। यहां आकर लौट जाने मे भला क्या बुद्धिमानी है ?"

विट्ठलजी ने आशा दिलाते हुए कहा, "आप लोग चलने की तैयारी करे। हम विष्णुजी को मना लेगे।"

ललिताबहन चली गई। उनके जाने के कुछ ही देर बाद गुलाम नबी ने बताया कि रात को हम लोगो के चार टट्टू कही चले गये है। सुनकर स्तब्ध रह गये। अब क्या होगा ? गुलाम नबी ने कहा, "रात को पानी और ओले पडने से गजब हो गया। बचाव को कुछ था नही। बेचारे टट्टू अपनी जान बचाने के लिए कही भाग गये। रमजान और कुछ लोग उन्हे तलाश करने गये है।" हमारी समझ मे नही आ रहा था कि टट्टू न आये तो आगे की यात्रा कैसे होगी ?

हम लोग रात को चर्चा कर रहे थे कि तम्बू मे बैठे-बैठे जब हम पर ऐसी बीत रही है तो बेचारे टट्टू वालो और टट्टुओ को तो न जाने कितनी मुसीबत का सामना करना पड रहा होगा, जिनकी रक्षा के लिए नीचे तग गुफा और ऊपर पत्थरो को जोड कर और मेले के समय की पडी टीन को ऊपर रखकर बनाई गई छोटी-सी मढी के अतिरिक्त और कुछ न था। उन्होने जैसे-तैसे रात काटी, नीद तो उनको भी कहा से आती! सोने को जगह थी ही नही। टट्टुओ को खोजते रात मे भटकना पडा, सो अलग।

बिस्तर बाध कर हम लोग बाहर आये और विष्णुजी के तम्बू की तरफ गये। विष्णुजी निवृत्त होकर आये ही थे। मैने हँसते हुए कहा, "क्यो विष्णुजी, क्या हालचाल है? सुना है, आप तो लौटने की तैयारी कर रहे है ? जरा से मे घबरा गये क्या ?"

उन्होने मुस्कराते हुये कहा, "जरा-सी बात थी, महाराज !

यहा तो जान निकलने की नौवत आ गई । आप लोगो का पता भी नही चला कि हम है कहा ? जव ओले पड रहे थे, आप लोग तो आराम से सो रहे थे । हम लोगो का तो एक तम्वू ही उखड गया । सारे कपडे भीग गये । वडी मुश्किल से खडा किया । सारी रात जागते काटी है । वाज आये ऐसी यात्रा से, महाराज ! हमने तो लौटने का तय कर लिया है ।"

विट्ठलजी ने कहा, "आप भी क्या वात करते है विष्णुजी, ऐसी ही चीजें तो यात्रा को मजेदार वनाती है ।"

विष्णुजी वोले, "मजेदार तो वनाती है, पर जान भी तो फालतू नही है । अपन तो अव आगे जाने के नही । वारिश के कारण आगे का रास्ता जरूर विगड गया होगा । इतनी ही मुसीवत काफी है । स्वाद चख लिया । और मुसीवत कौन उठावेगा ?"

मैने उन्हे जोश दिलाते हुये कहा, "विष्णुजी, कैसी वात करते है आप ! आपसे अच्छी तो ललितावहन है, जिन्होने अभी तक हिम्मत नही हारी और अमरनाथ जाने को तैयार है ।"

"तो उनको आप लोग ले जाय । अपने राम तो वापस ही जावेगे ।"

हम लोगो ने उनको वहुत समझाया और उनके मन का डर कम करने की काफी कोशिश की । तव विष्णुजी गभीर होकर वोले, "देखिये साहव, आप हिम्मत की वाते तो करते है, लेकिन क्या ठिकाना कि आगे फिर वारिश आ जाय ! रास्ते में वरफ हुई तो ? रास्ता रपटीला हुआ तो ? कोई दुर्घटना हो गई तो ? कौन जिम्मेदार होगा ?"

लेकिन हम लोगो की पार्टी के उत्साह और आगे वढने के निश्चय तथा विट्ठलजी की विश्वास-भरी वातो से विष्णुजी ढीले पडे । वोले, "वडी जिम्मेदारी है साहव, इतनी वडी पलटन को मुसीवत-भरी यात्रा कराने मे ।"

विट्ठलजी वोले, "आप वेफिक्र होकर चले । विश्वास रखें,

अब कुछ होगा ही नही।"

विष्णुजी फौरन बोल उठे, "और होगा भी तो आप करेंगे क्या ? रात को ही अपने क्या कर लिया था ?"

"अजी, आप चलिये तो सही, भगवान का नाम लेकर। सब ठीक होगा।" विट्ठलजी ने और मैने कहा।

विष्णुजी का मन जाने और न जाने के बीच झूल रहा था। सबका आग्रह देखा तो वह जाने को तैयार हो गये। उनकी तैयारी तो हो ही रही थी। वापस जाते या आगे जाते। उन्होने कहा कि आप लोग चलिये। हम जरा नाश्ता करके आपके पीछे-पीछे आते है।

हम लोगो ने अपने तम्बू मे लौट कर शेष सामान को ठीक किया। गुलामनबी ने खुशखबरी दी कि टट्टू मिल गये है। जान-मे-जान आई। हम लोगो ने जलपान किया, टट्टू वालो ने सामान लादा और कूच को तैयार हो गये।

लेकिन धीरे-धीरे आकाश मे बादल घिरने लगे। विष्णुजी ने पुकारा, "यशपालजी, देखते है, यह क्या हो रहा है ? आप लोग हमारी मुसीबत करने पर तुले हुए मालूम होते है।"

हम लोगो ने बिना किसी भय के उत्तर दिया, "आप चिन्ता न करे। बस, जल्दी रवाना हो जाय। भगवान सब ठीक करेंगे।"

टट्टुओ को देखकर दया आती थी। रात भर बेचारे भीगते और भूखे भटकते रहे थे। न वहां बचने को कोई पेड था, न चरने को घास। जाने कैसे, उन मूक प्राणियो ने रात काटी होगी, और टट्टू वाले तो रात भर उनको खोजने मे ही भागते फिरे थे। सुबह फिर आगे की मजिल के लिए तैयार। उनकी यह हिम्मत और फुर्ती देखकर मन उनकी प्रशंसा से भर गया और उनकी तुलना मे अपने ऊपर शर्म आई।

विष्णुजी अभी तैयार न थे। उनकी पार्टी खाने-पीने मे लगी थी, चाय पी रही थी। हमारी पार्टी टट्टुओ पर सवार होकर चल

दी। मैंने सोचा कि कही हम लोगो के निकल जाने पर इन लोगो का विचार न वदल जाय। अत मैं अपनी पार्टी का साथ छोड कर विष्णुजी की पार्टी के साथ जाने को रुक गया। मैं वार-वार उनके टट्टू वालो से टट्टू कसने को कहता था, पर वे सुनते ही न थे। ऐसा जान पडता था, मानो वे भी जाने से आनाकानी कर रहे है। तव मैंने उनको डाटकर कहा कि देर हो रही है। टट्ट तैयार करो। इस पर अलकसाता-सा एक टट्टूवाला उठा और इधर-उधर फैले टट्टुओ को इकट्ठा कर लाया। तवतक विष्णुजी और उनकी पार्टी कलेवा कर चुकी थी। टट्टू कसकर आते ही रवाना हो गये। क्षितिज पर जहा निगाह जाती थी, वादल-ही-वादल दिखाई देते थे। विष्णुजी की पार्टी के एक साथी ने कहा, "मौसम वडा खराव हो रहा है। देखो, कैसे वादल छाये हुए है।"

मैंने कहा, "ये वादल वरसने वाले नही है।"

"रात भी तो ऐसे ही थे।"

"जी नही, रात के वादल तो काले थे।"

विष्णुजी ने कहा, "अव तो चल ही पडे है। वादल काले हो या सफेद, जो होगा देखा जायगा।"

हम लोग आगे वढ चले। मैंने एक वार मुड कर जोजपाल को देखा। एक क्षण मे रात का सारा दृश्य आखो के आगे घूम गया। मैंने मन-ही-मन उस अदृश्य शक्ति को प्रणाम किया, जो प्रकृति और मानव की प्रत्येक क्रिया का सचालन करती है और जिसकी मर्जी के विना एक पत्ता भी नही हिल सकता।

: १० :

कुट्टाघाटी, शेषनाग और वायुजन

हमारी टोली आगे निकल गई थी और जव विष्णुजी की टोली रवाना हुई तो वादल काफी घिर आये थे। आगे वढने का

उत्साह और निश्चय होने पर भी मन आशंकित हो उठा था।

मैदान पार करने के बाद फिर चढाई शुरू हो गई, लेकिन दृश्य अब पहले जैसे न थे। किसी भी पर्वत पर पेड देखने को भी न थे। सारे पहाड नगे खडे थे। उन्हे देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो व हृदय की विशालता के साथ-साथ अपरिग्रह का पाठ भी पढा रह हो। कह रहे हो कि आदमी ज्यो-ज्यो ऊपर उठता है, दुनिया का आडम्बर कम होता जाता है और किसी किस्म का लगाव नही रह जाता है। हमारे ऊपर मेघाच्छन्न अनन्त आकाश था, दोनो ओर नगी पहाडी चोटिया, पतला मार्ग और पहाडो के बीच वेग से बहने वाली शेषनाग नदी। सब भयानक था, लेकिन विशालता और भव्यता लिये हुए। महान साहस अथवा अचल श्रद्धा के बिना यहा कोई दो कदम भी आगे नही बढ सकता।

जोजपाल से कुछ आगे चल कर कुट्टाघाटी आई। इसकी लम्बाई लगभग एक मील थी, लेकिन चढाई इतनी सख्त और खतरनाक थी कि भलो-भलो के होश गायब हो सकते थे। रास्ता बहुत ही ऊबड-खाबड था। पत्थर-पर-पत्थर पडे थे। ऐसे मे जब एक प्रवाहित झरने को पार करना पडा तो मन एक साथ सिहर उठा। बनिहाल की घाटी हम लोगो ने बस मे बैठकर पार की थी और उसकी सबसे ऊची चोटी पीरपचाल पर पहुचकर लगा था, जैसे हम लोगो ने कोई गढ जीत लिया हो। पिस्सू घाटी को पार करने मे भी बडे आनद का अनुभव हुआ था, लेकिन अब तो हम ११,६०० फुट की उचाई पर थे और इच्छा होती थी कि उचाई पर भले ही चढे, पर रास्ता इतना जानलेवा तो न हो। पत्थर पर टट्टू जिस समय अपना पर रखता था तो ऐसा जान पडता था कि अब फिसला, अब फिसला। और वहा फिसलने का अर्थ होता था सीधे पाताल-दर्शन। पर वाह रे टट्टुओ, एक के बाद एक, ऐसे सधे हुए पैर रखते थे कि

हम लोगो को देख कर भेडे विचलित नही हुई । ज्यो-की-त्यो बैठी रही । हम लोग एक ओर होकर आगे बढ़ गये ।

इसके पश्चात एक छोटी घाटी और पार की । शेषनाग नदी हम लोगो के साथ ही चल रही थी । अब वह इकली थी । उसकी शोभा मे चार चाद लगाने वाले घने वृक्ष पीछे छूट गये थे और वह एकाकी पथिक की भाति अकेली, नितात अकेली, पर्वतों के वक्ष को चीर कर अपने मार्ग पर चल रही थी । अचभा होता था कि इतनी उचाई पर इतनी तीव्र प्रवाहिनी नदी का क्या प्रयोजन है ? पर प्रकृति की माया को कौन जान सकता है ?

जोजपाल से शेषनाग कुल चार मील है, लेकिन ८ बजे के चले हम लोग वहा १०-३० पर पहुचे । इस स्थान का वडा धार्मिक महत्व है । यहा एक झील है, जिसमे से हमारे अवतक के रास्ते की चिरसगिनि शेषनाग नदी निकलती है । झील का आकार काफी लम्वा-चौडा है और उसका जल नीलवर्ण का बडा ही स्वच्छ है । ठण्डा इतना कि हाथ डालना मुश्किल । यह झील पहाडो की गोद मे है । इधर-उधर पहाडो की चोटियो पर वर्फ लदी थी । हमने अनुमान किया कि यह शायद पिछले रात की वर्षा और ओलो के कारण है, लेकिन पूछने पर मालूम हुआ कि वहा बर्फ हमेशा जमी रहती है । झील समुद्र-तट से ११,७३० फुट ऊची है ।

झील से लगभग एक मील पर वायुजन स्थान आता है । यहा हवा वडी तेज चलती है और इसीलिए इसका यह नाम पडा है । यहा सर्दी भी वहुत अधिक है । यात्रियो के ठहरने के लिए यहा टीन के अस्तवल जैसे घर वने है । दो रेस्ट-हाऊस है । स्थान वडा रमणीक है । सामने हिमाच्छादित पर्वत, नीचे शेपनाग झील जिसमे से शान से वहती शेपनाग नदी । वहुत से यात्री यहा आकर लौट जाते है ।

हम लोगो की पहली टोली यही आकर रुक गई । विष्णुजी

की टोली के साथ मै भी वहा पहुच गया। अब सलाह होने लगी कि भोजन के लिए यहा रुका जाय या आगे वढा जाय। आकाश अब भी बादलो से लदा खडा था। विष्णुजी ने मुस्कराते हुए जव बादलो की ओर इशारा किया तो हम लोगो ने कह दिया, "देखिये अब तो निकल पडे है। इन बादलो को देखकर अपना निश्चय वदलने वाले है नही। सब लोग साथ है। जो बीतेगी, सबके साथ बीतेगी। भगवान सब ठीक ही करेगे।"

हम लोग एक चट्टान पर बैठे थे। भूख लगी थी और कुछ मुह चलाते जाते थे। वादलो को देख कर और वर्षा की आशका की कल्पना करके रुकने को जी नही होता था। बस भी सामान के टट्टू पीछे थे। उम्मीद थी कि दस-पाच मिनट मे आ जायगे, लेकिन सर्वसमिति से सलाह हुई कि रुकना ठीक नही होगा। यही तय किया कि सामान के टट्टू आ जाय तो सब साथ आगे को चल दे।

सर्दी यहा कडाके की थी, पर उसकी ओर ध्यान देने का जैसे किसी के पास अवकाश न था। हम लोग कभी वहा की निराली शोभा को निरखकर पुलकित होते थे तो कभी बादलो को देखकर चितित हो उठते थे। पूर्वी-पश्चिमी कोने के पहाड का दृश्य तो अद्भुत था। उसकी बनावट बडी आकर्षक थी, साथ ही वर्फ उसपर कुछ इस ढग से पडी थी कि हम लोगो की निगाह उस पर से हटती ही न थी। बादल उसपर घिर रहे थे। वहा एक बडी कन्दरा का बोध होता था। हम लोगो ने पर्वतराज के उस महान दृश्य का चित्र लिया। यदि सूर्य भगवान के दर्शन एक मिनट को भी हो जाते तो उस दृश्य का बडा ही भव्य चित्र आता।

इस स्थान के विषय मे एक धर्म-कथा प्रचलित है। कहते है, किसी जमाने मे इस पर्वत पर एक बलवान राक्षस रहता था, जो वायु के रूप वाला था। वह देवताओ को बडा कष्ट देता था। उससे त्रस्त होकर सारे देवता शिवजी के पास गये, उनकी स्तुति

की; शिवजी प्रसन्न हुए। देवताओ ने राक्षस के त्रास की कहानी कह सुनाई। शिवजी ने कहा, "मैने उसे वरदान दिया है कि मै उसे नही मार सकता। आप लोग विष्णुजी के पास जाओ।" तब देवो ने क्षीरसागर पर जाकर विष्णु की स्तुति की। उन्होने प्रसन्न होकर कहा, "मै अभी उस राक्षस का नाश कर डालूगा।" देवता चले गये। तभी पाताल से शेषनाग प्रकट हुए। विष्णुजी ने उनपर चढकर आज्ञा की कि हे सर्पराज, तुम हजार मुख से वायु का पान करो। सर्पराज ने ऐसा ही किया और वायुरूप राक्षस का भक्षण कर लिया। कहते है, उसी समय से इसका नाम शेषनाग पड गया। बाद मे एक और दैत्य ने यहा उपद्रव किया और इन्द्र ने अपने वज्र से इसी स्थान पर उसका हनन किया। तब से यह स्थान वायुवर्जन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कालातर मे वायुवर्जन से बिगड कर वायुजन हो गया। जो हो, स्थान बडा सुन्दर है।

: ११ :

फिर मुसीबत

वायुजन मे हम लोग मुश्किल से आधा घटा ठहरे होगे कि फिर चल पडे। आगे की यात्रा अब और कठिन दिखाई पड रही थी। पेडो का साथ जोजपाल मे छूट गया था। यहा आकर नदी से भी विछोह हो गया। अपने मायके पहुचकर और अपनी जननी की गोद मे सिर रखकर वह तो प्रसन्न हो गई, लेकिन हम लोगो को उसका वियोग दुखदाई हो गया। परन्तु शोक-सताप के लिए समय और सुविधा कहा थी ! हम लोगो ने दूर से ही झील, नदी और हिमाच्छादित पर्वत को मन-ही-मन प्रणाम किया और आगे बढ गये। वायुजन की उचाई लगभग तेरह हजार फुट है।

कुछ दूर तक उतराई आई। पर्वतो मे उतराई भी चढाई

से कम मुसीबत की नही होती। यात्री जानते है कि उतराई का अर्थ होता है फिर चढाई। दूसरे उतराई पर अपने शरीर को साधने मे अधिक होशियारी और सतुलन की आवश्यकता होती है।

यहा से पचतरणी आठ मील थी। वहा पहुचकर रात बितानी थी। हम लोग भगवान से प्रार्थना कर रहे थे कि कैसे हो पचतरणी पहुच जाय। वहा यात्रियो के ठहरने के लिए पत्थर और टीन के कुछ घर बने हुए है। वहा पहुचने पर वर्षा भी आ जाय तो अधिक परेशानी नही होगी।

आगे के रास्ते मे झरने बहुत आते है और उन्हे बार-बार पार करना पडता है। मेले के समय उन पर पुल बनाये गये होगे, लेकिन उनमे से अब अधिकाश टूट चुके थे और उन्हे पार करने के लिए जलधारा मे होकर जाना पडता था। वायुजन से चलकर पहला प्रपात आया। सुधीर सबसे आगे था। उसका टट्टू पुल के रास्ते आगे बढा जा रहा था और करीब-करीब सिरे तक पहुच गया था। पुल टूटा था। एक कदम और बढा तो वह और सुधीर धडाम से नीचे पानी मे गिरेगे, इस आशका से मै काप उठा, लेकिन सुधीर ने तत्काल लगाम खीची, और टट्टू भी कहा उस खतरे को उठाने वाला था! इतने मे पीछे से लपक कर टट्टूवाले ने लगाम पकड ली, मोडकर नीचे ले आया और धारा को पार करा दिया।

हम लोगो ने चदनवाडी पर पहला बर्फ का पुल देखा था, बाद मे कुछ स्थानो पर नदी के ऊपर बर्फ जमी देखी, लेकिन अब जो दृश्य सामने आये, उनके आगे–पीछे के सब दृश्य फीके पड गये। यहा अधिकाश उपत्यकाए बर्फ से जमी पडी थी।

टट्टूवालो ने बताया कि बर्फ पर चलना खतरे से खाली नही होता। अगर बर्फ कही से टूट जाय तो टट्टू और सवार एकदम नीचे चले जाय और दोनो का पता भी न चले। इस प्रकार

जाने चली जाने की कई घटनाए हम पढ चुके थे। कई स्थानों पर बर्फ टूटी दिखाई दी और उसके बीच बडे-बडे छेद मिले।

झरना पार करने के बाद फिर चढाई शुरू हुई। अब रास्ता इतना सकरा और ढलवा था कि इधर-उधर देखते डर लगता था। यहा हमे और यात्री भी आगे जाते हुए मिले। मन मे सतोष हुआ कि चलो, आगे जो खतरा आयगा उसका मिलजुल कर मुकाबला कर लेगे।

दृश्य यहा के बडे भव्य और निराले थे। पर्वत हिममडित, उपत्यकाए बर्फ से ढकी और रास्ता सकीर्ण। जैसे-तैसे एक पहाड पार किया। टट्टू वालो ने दूर एक पहाड की ओर सकेत करके बताया कि हमे उस चोटी पर जाना है। उन्होने यह भी कहा कि यह चढाई सबसे कठिन है।

बादलो का रग अब और गहरा हो गया था और ज्योही हम लोगो ने कठिन चढाई पर पैर रक्खा कि बूदाबादी शुरू हो गई। पाठक सोच सकते है कि उस समय हमारे मन पर क्या बीती होगी। मेह से बचने के लिए न कोई रूख, न कोई गुफा, न कुछ सहारा। हम लोगो ने बरसातिया ओढ ली और घबराहट को हृदय मे छिपाये आगे बढने लगे। वर्षा के साथ-साथ कोहरा इतना घना था कि गज भर आगे का भी रास्ता नही दीखता था। लेकिन दृश्य घडी-घडी बदलते थे। कभी कोहरा इतना गहरा हो जाता था कि रास्ता नही सूझता था, कभी इतना साफ हो जाता था कि मार्ग की भयकरता स्पष्ट दीख जाती थी और दिल दहल उठता था।

हम लोग चुपचाप चले जा रहे थे। इतने मे मार्ग की नीरवता को भग करती हुई और भयकरता की ओर से ध्यान हटाती हुई एक सुरीली और कापती हुई बारीक-सी आवाज कानो मे पड़ी, 'जय शिवशभो', 'जय शिवशभो', 'जय शिवशभो धरणीश', 'वदे गगाधरमीश', और सारी पार्टी उत्साह से 'जय शिवशंभो',

'जय शिवशंभो' के नाद का उच्चार करने लगी, मानो सबको एक बड़ा भारी सहारा मिल गया—रास्ते की भयंकरता से ध्यान हटाने और दुर्गम पथ पर हिम्मत से बढ़े चलने का। महागुनस की ऊंची चोटी पर जबतक सब पहुंच नहीं गये, बादलों और बौछारों के बीच यह शिवाराधना निरन्तर जारी रही। बीच-बीच में कभी सुधीर, तो कभी भाभी, कभी मैं तो कभी कोई दूसरा, 'अमरनाथ की जय' के नारे जोर से लगाते थे। हमारी यात्रा की यह बड़ी भयंकर घड़ी थी। मालक आगे या पीछे हो जाते तो मैं चिल्लाकर पूछता, "मालक, हाऊ आर यू ?" तत्काल सुनाई पड़ता, "क्वाइट वैल।"

इस प्रकार हमारी पार्टी आगे बढ़ती जा रही थी, लेकिन हम लोग मन में कुछ डर-से रहे थे कि विष्णुजी और ललिताबहन की पार्टी को आग्रह करके लाना ठीक हुआ या नहीं। ईश्वर न करे, कहीं कुछ हो गया तो बड़ी बदनामी पल्ले पड़ेगी।

विट्ठलजी ने कहा, "यह यात्रा खूब याद रहेगी।"

मैंने कहा, "ये सब बातें न हों तो यात्रा में मजा क्या आया!"

हमारी बात सुनकर पीछे से आते हुए विष्णुजी की आवाज सुन पड़ी, "वाह यशपालजी, फंसाया न आपने बुरी तरह। हमने पहले ही समझ लिया था कि आप अपनी आदत से बाज नहीं आवेंगे। देखिये, अब चल तो पड़े हैं, कहां पहुंचते हैं? अमरनाथ या अमरपुरी ?"

मैंने कहा, "विष्णुजी, हम सब साथ हैं, हम-सफर साथी हैं। आप जहां जायंगे हम भी तो वहीं चल रहे हैं ?"

और मैंने पुकारा, "मालक, हाऊ आर यू ?" उधर से जवाब आया, "क्वाइट वैल।"

और सुधीर चिल्ला उठा—"बोलो, अमरनाथ महाराज की   "

सब लोग चिल्लाये, "जय!"

वर्षा बराबर होती रही। रास्ता इतना रपटीला हो गया कि कही-कही हाथ-हाथ भर टट्टुओ के पैर, उनकी पूरी सावधानी के बावजूद, आगे फिसल जाते थे। हम लोगो के दिल काप उठते थे। अच्छा यह था कि कोहरे के कारण निचाई प्राय बहुत साफ नही दीखती थी और उचाई भी जब कभी ही सामने आती थी, पर स्थूल आखो की इस विवशता के होते हुए भी सूक्ष्म आखे तो बराबर भयकरता को देख ही रही थी। जैसे थका पथिक बार-बार अपने साथी से पूछता है कि ओ भाई, अभी कितना और चलना है, वैसे ही हम बार-बार अपने टट्टूवालो से पूछते थे, "क्यो भाई, अभी कितनी चढाई और है ?"

रोज के अभ्यस्त वे लोग कह देते थे, "अभी क्या है बाबूजी ! अभी तो आधे भी नही आये है।"

उनके लिए यह कह देना सहज था, लेकिन हमपर उसका क्या असर होता था, यह हमी जानते है। हम तो यह सुनना चाहते थे कि बस चढाई अब खत्म होने ही वाली है, भले ही चढना चार मील और क्यो न बाकी हो !

प्रकृति का प्रकोप कहिए या कृपा, बारिश निरतर जारी रही, पर हम लोग एक क्षण को भी कही नही रुके। सारा वायुमण्डल जितना गभीर था, उतना ही निस्तब्ध। उस निस्तब्धता को भग करने वाला 'जय शभो' का स्वर बडा भला मालूम होता था। पूरे जोर से जब हम लोग 'अमरनाथ की जय' बोलते थे तो ऐसा जान पडता था कि भय को हम लोग कील डालेगे, लेकिन चढाई द्रौपदी के चीर की भाति बढ़ती ही जा रही थी, और हमारी सारी पार्टी चली जा रही थी, चली जा रही थी। इस सारे भय के वातावरण मे भी सुधीर का टट्टू सबसे आगे था। कई बार मैने तथा पार्टी के और लोगों ने सोचा कि हम लोग अपना टट्टू आगे कर ले, उससे कहा भी, लेकिन उसने हम लोगो की एक न सुनी और अपना टट्टू बराबर आगे ही रखा।

टट्टूवालो ने वताया कि यहा कुछ ऐसे फूल होते है, जिनकी खुशवू से आदमी को वेहोशी-सी हो जाती है, चक्कर तो वहुतो को आ जाते है, लेकिन हमने उनकी वात की ओर ध्यान न दिया। न हममे से किसी को ऐसा अनुभव ही हुआ। शायद जिस मुसीवत मे से गुजर रहे थे, वही इतनी वडी मालूम दे रही थी कि दूसरी ओर ध्यान देने का औसान ही किसी को न रहा था।

लगभग पौन रास्ता इसी अवस्था मे पार किया। उसके वाद कोहरा एक साथ दूर हो गया। हम लोगो ने सामने, पीछे और इधर-उधर देखा। ऐसा लगता था कि हम लोग किसी जादू के जोर से वहा पहुच गये है। दोनो ओर ऊचे-ऊचे पहाड, पहाडो के वीच गहरी खाई। खाई की तलहटी तक निगाहही नही पहुचती थी। यहा एक विशेपता ने हम लोगो का ध्यान विशेपरूप से आकृष्ट किया। इधर कोई भी दो पहाड एक रग के न थे। कोई टूटे-सूखे पेड की तरह और उसके रग का था तो कोई रेल के जले कोयले जैसा, कोई मटमैला, तो कोई कत्थई। यह वडी विचित्र वात थी। जगह एक, वायुमण्डल एक, आकाश एक, सूर्य का ताप, सर्दी और वर्फ भी एक, लेकिन पर्वतो के नाना रूप और वर्ण है। प्रकृति की लीला अपरम्पार है।

चारो ओर विलक्षण दृश्य थे। पानी वद नही हुआ था, पर उसका वेग कम हो गया था। वरसाती को सिर पर थोडा पीछे की ओर खीच कर इधर-उधर के ये दृश्य मजे से देखे जा सकते थे।

घोडे की पीठ पर बैठे-बैठे ही हम लोगो के जूते, मोजे तथा धोतिया कीचड से लथपथ हो गई थी। जाडा भी खूब था। कपडे भीग रहे थे। टट्टूवालो की तो हमसे भी ज्यादा मुसीबत थी। उनको पैदल चलना पड रहा था। उनके पास अपने को बचाने के लिए छाते या बरसातिया भी न थी। वे बुरी तरह भीग रहे थे। उनके फटे-फटाये जूते पानी मे भीग कर और मिट्टी से सनकर

काफी भारी हो गये थे, फिर भी वे बिना एक शब्द मुह से निकाले चुपचाप चल रहे थे। उन्हे देखकर मन मे एक विचार बार-बार उठता था। इस शरीर को आदमी जैसा चाहे, बना सकता है।

राम-राम करते महागुनस की यह महान चढाई पूरी हुई। ऊपर पहुचे तो मालूम हुआ कि हम लोग लगभग १६,००० फुट की उचाई पर पहुच गये है। वहा एक पत्थर पडा था, जिस पर १४,७०० फुट लिखा था। रमजान ने बताया कि पत्थर पहले बहुत निचाई पर था, लेकिन बाद मे वहा से उठा कर किसी ने यहा डाल दिया।

ऊपर पहुचते-पहुचते टट्टू पस्त हो गये थे। हम लोग भी थोडी देर को उनपर से उतर पडे। फिर जो नीचे निगाह डाल कर देखा तो सहसा विश्वास नही हुआ कि उस भयकर चढाई को हम पार करके आये हैं। ऐसा लगा, मानो अमरनाथ की जयकार ने हमे आराम से लाकर उस जगह पहुचा दिया।

रमजान ने कहा कि यहा से आगे निल नाम की एक प्रकार की घास मिलती है। उसे खाने से टट्टू फौरन मर जाता है; लेकिन यहा वाले टट्टू उसे पहचानते है। उस तक जाते नही। यात्रा के दिनो मे नये टट्टू अक्सर धोखे मे खा लेते है और मर जाते हैं।

चढाई पार करते समय हमे बीच-बीच मे पीले रग के करन-फूल जैसे छोटे-छोटे फूल दिखाई दिए थे। रमजान ने बताया था कि उन्ही की खुशबू से बेहोशी-सी होती है, लेकिन हम लोगो पर तो वैसा कुछ भी असर नही हुआ।

शिखर पर पहुचकर अधिक नही रुके। पचतरणी अभी पांच मील थी। भूख कडाके की लगी थी। झोले से निकालकर एक-एक, दो-दो बिस्कुटो और बादामो से मन बहलाया, फिर चल पडे। अब पचतरणी तक उतराई-ही-उतराई थी। चार-साढ़े

चार हजार फुट हमे उतरना था ।

बादलो के कारण धूप का नामोनिशान न था । चारो ओर पहाडो पर बर्फ-ही-बर्फ दिखाई देती थी । कही बर्फ की मोटी-मोटी लकीरो को देखकर भ्रम होता था कि वे दूध की धाराए है, कही नुकीली चोटी को बर्फ से ढकी देखकर ऐसा लगता था कि किसी ने उस पर चादी का खोल चढा दिया है । अब भय मन से बिल्कुल निकल गया था और हम शात भाव से प्रकृति की उस अनुपम छटा का आनद ले सकते थे ।

पेडो की भाति पक्षियो के भी यहा दर्शन नही होते । शेषनाग मे कही से टिटहरी की-सी आवाज आई थी, लेकिन दिखाई कोई भी पक्षी नही दिया था । अपने जीवन मे मैने अनेक पहाडी स्थल देखे है, लेकिन इतना दुर्गम और इतना निर्जन स्थान मैने अबतक नही देखा । प्रकृति का रूप यहा जितना अलौकिक था, उतना ही भयावना । चारो ओर वृक्षहीन, हरियाली-रहित पर्वत और सुनसान इतना कि अपने हृदय का स्पन्दन भी आप सुन सके ।

रात के जगे थे, चढाई से थके थे, पर मन उमग से भरा था । दुर्गम रास्ता पार कर चुके थे । बारिश थम गई थी । पचतरणी के झोपडे दूर से नजर आ रहे थे ।

: १२ :

अंतिम पड़ाव

अब हम लोग जल्दी-से-जल्दी पचतरणी पहुच जाना चाहते थे, लेकिन महागुनस से आगे उतराई-ही-उतराई थी और रास्ता बहुत ही रपटीला था । हम लोगो को कदम-कदम पर अनुभव होता था कि अब गिरे, अब गिरे, पर भगवान की कृपा से कोई दुर्घटना नही हुई । हम सब साथ-साथ जा रहे थे । इस मुसीबत के

वक्त में मार्तण्डजी का टट्टू भी थोडी देर को अपनी शरारत भूल गया था।

आगे पहाड बिल्कुल नगे थे, लेकिन दृश्य बडे सुन्दर थे। यहा जैसी उपत्यकाए पीछे कम ही मिली थी। वस्तुत इस यात्रा की सबसे बडी विशेषता यही थी कि दृश्य बराबर नये-नये दिखाई देते थे। जिस प्रकार चित्रपट में एक के बाद दूसरा, नया दृश्य आता है, वही हाल इस प्रवास में था। कोई भी एक दृश्य दूसरे से नही मिलता था। और क्या मजाल कि आप एक पर्वत को देखकर दूसरे की कल्पना कर सके!

उचाई के कारण महागुनस की चोटी पर सर्दी बहुत थी। हवा अब भी ठण्डी थी, लेकिन उतराई पर ठण्डक कुछ कम हो गई। पीछे के रास्ते की चर्चा करते हुए हम लोग आगे बढे जा रहे थे। अमरनाथ का जय-घोष अब भी जल्दी-जल्दी और अधिक ऊचे स्वर में सुन पडता था।

रमजान ने बताया कि महागुनस की चढाई वैसे ही बडी कठिन है, लेकिन वर्षा मे तो वह बहुत ही खतरनाक हो जाती है। कभी-कभी बूढे या कमजोर आदमी जान से हाथ धो बैठते है। टट्टुओ का भी कभी-कभी दम टूट जाता है।

मैने कहा, "रमजान, जिसको भगवान बचाता है, उसको कोई भी नही मार सकता।"

"यह तो है ही, बाबूजी।" रमजान बोला, "लेकिन हम लोग तो हमेशा देखते है कि यहा कितनी मुसीबत होती है।"

उतराई का यह रास्ता 'पोषपथ' कहलाता है। उसे पार करने के बाद तीन नाले आते है। तीनो का नाम एक ही है—केलनाड। उनके पानी मे बडा वेग था। दाई ओर बरफ का एक पर्वत आया। उधर रास्ते मे एक घोडा मरा पडा था। रमजान ने कहा कि सर्दी के मारे अकड गया दीखता है। दो-एक दिन पहले कोई यात्री दल आया होगा, उसीका यह हो सकता है। उस ओर ज्यादा ध्यान

दिये विना हम आगे वढ चले ।

आगे नगारखा आया। वहा एक छोटी-सी चट्टान थी, जिसके चारो ओर ऊचे-ऊचे वरफ के पहाड थे । किसी ने वताया कि पहले यात्री यही तक आते थे और यही पर शिवलिंग के दर्शन होते थे। किसी ने यह भी कहा कि नगारखा अमरनाथ का पहरेदार था। टट्टू वालो ने नगार खा की जय वोली और हमसे भी वुलवाई ।

अव पचतरणी के घर साफ दिखाई देने लगे थे । उन्हे देख कर वडा सुख मिला। पानी विल्कुल वन्द हो गया था। वादल भी साफ होते जा रहे थे । मन दौड-दौड कर उन घरो तक पहुच जाता था। जी होता था कि टट्टू हवा मे उड जाय और वहा पहुच जाय, पर वे तो अपनी ही रफ्तार से जा रहे थे ।

पचतरणी सिन्ध नदी के किनारे पर है । वहा नदी की पाच धाराए है, जिनके कारण उनका नाम पचतरणी पडा है । हम लोगो ने पहली धारा पुल से पार की । तीन धाराओ में थोडा पानी था। अन्तिम धारा काफी चौडी थी और पानी का वहाव भी उसमे वहुत तेज था । सुधीर सवसे आगे था । मैंने टट्टूवाले को आवाज दी और कहा कि वढकर उसके टट्टू की लगाम पकड़ ले, लेकिन टट्टूवाला पहुचे, उससे पहले ही सुधीर ने टट्ट को पानी मे छोड दिया। पानी टट्टू के पेट तक आया, कुछ और सोचे कि उससे पहले ही सुधीर आगे वढकर पार हो गया ।

पचतरणी ४।। वजे पहुंचे । भूख के मारे वुरा हाल हो रहा था, लेकिन खाने को साथ मे कुछ था ही नही । सामान वाले टट्टू पीछे आ रहे थे ।

पचतरणी पहुचकर हम लोगो ने ठहरने का स्थान देखा । छोटे-छोटे घुडसाल जैसे लवे कमरे थे, जिनके ऊपर टीन थी, लेकिन फर्श कच्चे थे। ऐसे ही एक कोठे मे अपना डेरा जमाया । उसके एक कोने मे चूल्हा था, जिसमे किसी टट्टू वाले ने आग

जला रखी थी। हम लोग तापने लगे। अचानक हमने देखा कि मार्तण्डजी हमारी टोली मे नही है। वाहर आकर दूर-दूर तक निगाह दौडाई, लेकिन दिखाई नही दिये। सब लोग चिन्ता करने लगे कि वह कहा रह गये ? कही उनका टट्टू गिर-गिरा तो नही पडा ? और कोई बात तो नही हो गई ? थोडी देर राह देखकर रमजान को उन्हे खोजने वापस भेजा। कुछ समय बाद देखते क्या है कि हँसते हुए मार्तण्डजी चले आ रहे है ? पहुचकर उन्होने वताया कि मैदान मे जहा कुछ देर टट्टू चरने के लिए ठहरे थे वहा सव लोग तो उतर पडे, पर वह टट्टू की पीठ पर बैठे-बैठे ऊघने लगे। कुछ देर बाद और लोग तो अपने-अपने टट्टू पर वैठकर आगे चल पडे। पर उनका टट्टू घास चरता रहा और वे ऊघते रहे। थोडी देर वाद जव आख खुली तो देखा कि टट्टूराम मजे मे चर रहे है और सव साथियो का पता नही। साथ बिछुड जाने से घोडे ने अपनी चाल और धीमी कर दी। वह उनके चलाये चलता ही नही था। वे घोडे की पीठ पर से उतरे पडे और उसे खीचते हुए लाने लगे। रास्ते मे रमजान मिला और तब वह टट्टू को भगाता हुआ लाया।

टट्टूवालो ने वताया कि ऊपर भी कुछ कमरे है, जो अच्छे है। थकान के मारे चला नही जाता था, फिर भी ऊपर चढकर गये। देखा, एक लम्वा हाल-सा था, जिसमे एक ओर को अमरनाथ से लौटा एक परिवार भोजन कर रहा था, दूसरी ओर को वही के सरकारी मजूर खाना पका रहे थे। हमने उनसे कहा कि वे उस खाली करके नीचे वाले स्थान पर चले जाय तो अच्छा होगा। हम सब लोग एक साथ रह लेगे, लेकिन वे लोग हमारी भाषा नही समझते थे। एक टट्टूवाले ने समझाया तो उन्होने इन्कार कर दिया। तव लाचार होकर नीचे नदी-किनारे ही तम्वू खडा करने का तय किया।

आकाश अव एकदम निर्मल हो गया था और इतनी धूप निकली थी कि देखकर हृदय आनन्द से उछल पड़ा। वर्षा के वाद

धूप वैसे भी अच्छी लगती है, लेकिन यहा १२,००० फुट की उचाई पर तो धूप का अपना महत्व था ।

यह घाटी 'सिंध की घाटी' कहलाती है और प्राकृतिक सौंदर्य की खान है। चारो ओर पर्वत प्रहरी की भाति खडे है और सिन्ध की धाराए कलकल निनाद करती हुई इस शान से वहती है कि देखकर यात्री मुग्ध हो जाता है और रास्ते की थकान भूल जाता है।

लगभग आधा घटे वाद सामान आ गया। हम लोगो ने तम्बू खडा करवाया और चटाई विछवाकर विस्तर खोल दिये। जो कपडे वहुत भीग गये थे, उन्हे सुखाने डाल दिया। जूते धूप मे रख दिये और मोजे भी उतार डाले। धूप से यो भी आराम मिल रहा था, लेकिन इतनी कठोर साधना के वाद मिलने के कारण उसका मूल्य कही अधिक वढ गया था।

विष्णुजी की पार्टी भी रात भर के लिए अपना घर वनाने मे व्यस्त थी। सव लोग सही-सलामत पहुच गये थे, इसका सतोष था। मुस्कराते हुए विष्णुजी घूम रहे थे। वोले, "यशपालजी, आप सवके भरोसे पहुच ही गये यहा तक ! अव कल की यात्रा और वाकी है। अव तो मौसम वडा सुहावना हो गया है। कल भी ऐसा ही रहे तो वडा आनद आवेगा।"

"कल इससे भी अच्छा हो जायगा। अमरनाथ की यात्रा को चले है, साहव ! पहले परीक्षा देनी होती है। वह तो हो गई और हम सव उसमे पास हो गये। किसी ने हिम्मत नही हारी। अव तो खा-पीकर विश्राम करे और सुवह भगवान का नाम लेकर अन्तिम मजिल के लिए जल्दी ही निकल पडे।" मैने कहा।

हम लोगो ने भी सव सामान जमा कर भोजन की तैयारी की। सवकी राय रही कि जो जल्दी तैयार हो जाय वह भोजन वने। चावल और पचमेल साग ही सभव था और सर्वसम्मति से यही तय पाया गया। पूडिया साथ मे थी ही। पहले चाय वनी,

मेरे और भाभी के लिए काफी। फिर साग चढाया गया। स्टोव जलाने की वहुतेरी कोशिश की, लेकिन सर्दी इतनी थी कि बार-वार स्पिरिट डालकर गरम करने पर भी उसकी नली गरम नही होती थी। काफी देर तक सिर खपाने पर भी वह नही जला।

अन्नदा ने वताया कि उसके सिर मे बडा दर्द हो रहा है। थोडी देर मे उसने कहा कि जी मिचला रहा है। कहने के कुछ ही मिनट वाद जोर की उल्टी हुई, वडी गदगी निकली। खाने-पीने मे कुछ ज्यादती हुई मालूम देती थी। दो वार उल्टिया फिर हुई। हर बार गदगी निकली। मैंने कहा, "चलो, पेट साफ हुआ।" लेकिन वह घबराती थी और कहती थी, "मुझे पहाड मत दीखने दो। पहाड देखकर चक्कर आते है।" उसे तम्वू मे बिस्तर पर सुलाया और सामने का पर्दा बन्द कर दिया। विट्ठलजी ने उसके सिर मे तेल की मालिश की। थोडी अमृतधारा दी। इस सबसे तवीयत कावू मे आ गई। इस यात्रा मे खाने-पीने का सयम बेहद जरूरी है।

चावल-साग तैयार हुए। दिन भर के भूखे तो थे ही, अच्छी तरह भोजन किया। हमारे निवास के निकट ही एक झरना था, जिसका पानी वडा अच्छा था। वही से लाकर पानी पिया।

खा-पीकर निवटे तो लगभग ८॥ वजे थे। आकाश मे तारे विछे हुए थे। उनके वीच चतुर्दशी का चन्द्रमा शोभायमान हो रहा था। दूध-सी चादनी फैली थी। विट्ठलजी कुछ अधिक थकान अनुभव कर रहे थे। वह तो लेट गये। मार्तण्डजी, भाभी, आदर्श और मै, वहुत देर तक वाहर नदी के किनारे टहलते रहे। रात का वह वडा ही अद्भुत दृश्य था। सामने का पहाड वर्फ और चंद्र-ज्योत्स्ना के कारण अकल्पनीय सौंदर्य से परिपूर्ण था। अन्य पर्वत भी हिममडित थे। उनके मध्य पचतरणी के थोडे-से घर और चार-पाच तम्वू प्रकृति के साथ मानव की आत्मीयता का वोध करा रहे थे। सिंध वडी गभीरता से वह रही थी। एक महापुरुष का कथन है—"जीवन मे मै केवल उन्ही

क्षणो को स्मरण रक्खूगा, जो उल्लास-पूरित थे ।" यह क्षण वास्तव मे उन्हीमे से एक था । उसकी शोभा का वर्णन शब्दो द्वारा कर सकना सभव नही है । काफी देर तक हम लोग घूमकर उसका आनद लेते रहे । ९॥-१० वजे के लगभग सो गये ।

शाम को एक घटना हुई । हम लोग चाय तैयार कर रहे थे कि एक वगाली वहन अपनी वाह पकडे हुए, वहुत घवराती-सी, आई । मैने पूछा, "क्या वात है ?"

वोली, "मै टट्टू से गिर गई हू ।"

"चोट तो नही आई ?" हम लोगो ने एक स्वर मे पूछा ।

"शायद वाह मे कुछ लगी हो ।"

वह सर्दी और सदमे से काप रही थी । मैने एक तरफ को सरक कर अगीठी के पास उनके लिए जगह कर दी । वह आकर वैठ गई । तापने लगी । कुछ देर मे सुस्थिर हुई । भाभी ने उनकी वाह पर विक्स लगाया और थोडी मालिश की । उसके वाद साडी के पल्ले को गरम करके उनकी वाह को जरा देर सेका भी । जव उन वहन को इससे चैन पडा तो वह कहने लगी, "आपने मेरी वडी सेवा की ।"

"वहनजी," भाभी ने कहा, "इसमे मैने सेवा क्या की ? यह तो सवका कर्त्तव्य है—एक-दूसरे की मदद करना । अमरनाथ की वडी कृपा हुई जो आपके ज्यादा चोट नही आई ।"

वडे तडके उठे । वैसा सुहावना प्रभात वहुत कम देखने मे आया है । सूर्योदय हो रहा था और आकाश मे वादल का एक टुकडा भी ढूढे नही मिल रहा था । इतनी कठिन यात्रा के वाद सुनहरी धूपवाला वह प्रभात ! सव लोग मारे खुशी के उछल पडे । कहने लगे कि अगर दिन भर ऐसा ही रहे तो यात्रा वडी सुन्दर रहेगी ।

हम लोग निवट-निवटा कर विष्णुजी की पार्टी मे जाकर कुछ

देर तक विनोद करते रहे । तय हुआ कि हमे अब यहा देर नही करनी चाहिए । तैयार होकर झटपट चलना चाहिए, जिससे दर्शन करके जल्दी ही लौट आवे और भोजन करके वापसी की यात्रा शुरू कर दे । अमरनाथ यहा से केवल चार मील था । आने-जाने के आठ मील, वहा कुछ समय और फिर पचतरणी से वायुजन के आठ मील । इस प्रकार सोलह मील का रास्ता शाम तक तय करना था और रात को वायुजन मे ठहरना था । टट्टूवाले तो कल ही आग्रह कर रहे थे कि हम लोग थोडी देर विश्राम करके अमरनाथ चले चले और दर्शन करके पचतरणी लौट आवे, जिससे बड़े तडके उठकर वापस चल पडे । लेकिन हम लोगो ने उनका यह प्रस्ताव नही माना । हम लोग थके हुए थे, फिर हमे लौटने की जल्दी भी क्या थी । टट्टूवाले चाहते थे कि उनका एक दिन बच जाय । प्राय यात्री तीसरे दिन अमरनाथ से लौट जाते है, पर हम लोग चौथे दिन लौटनेवाले थे । श्री बसतकुमार बिडला का ड्राइवर, कल सुबह ही पहलगाम से रवाना होकर रात को अमरनाथ के दर्शन करके पचतरणी पहुचा था । वह आज वापस पहलगाम पहुच जाने वाला था । उसकी हिम्मत देखकर हम दग रह गये ।

सुबह काफी भीड इकट्ठी हो गई । पहलगाम मे मिले कई परिचित यात्री यहा मिल गये । वह डाक्टर भी मिले, जिन्होने सुधीर को देखा था । और भी बहुत से स्त्री-पुरुष थे । सबको देखकर हर्ष हुआ । परदेस मे जितने साथी हो, अच्छा है ।

मार्तण्डजी को सास की अब भी शिकायत थी । मुझे भी जोजपाल से कुछ ऐसा लग रहा था कि हवा मे आक्सीजन की कमी ह । इसलिए जब-तब मुह खोल कर गहरी सास लेने की आवश्यकता पडती थी । रात को कुछ न खाने और हल्का पेट होने के कारण अन्नदा चगी हो गई । सुधीर भी बिल्कुल ठीक था । हम लोग जल्दी-जल्दी तैयार हुए । जब से पहलगाम से चले थे,

नहाने की बारी अबतक नहीं आई थी। दाढ़ी बढ़ी थी, लेकिन उसके साथ न्याय करने की तनिक भी इच्छा नहीं थी। अब तो एक ही अभिलाषा थी, जल्दी-से-जल्दी अमरनाथ पहुंचे।

जलपान कर रहे थे कि इतने में गुलाम नबी ने बताया कि हमारे चार टट्टू गायब हैं। वह बहुत परेशान था। उसने कहा, "कल एक आदमी से झगड़ा होगया था। उसीकी बदमाशी मालूम होती है।"

हमने पूछा, "अब क्या करोगे?"

"आप फिकर न करें।" वह बोला, "आप सामान तो ले ही नहीं जा रहे हैं। हम आपको चार लद्दू दे देंगे। जबतक आप लौटेंगे तबतक खुदा ने चाहा तो हम टट्टुओं को खोज निकालेंगे।"

एक चिंता फिर सवार हो गई।

: १३ :

साधना सफल हुई

जलपान करके अमरनाथ के लिए रवाना हुए उस समय ८ बजे थे। खूब सुहावनी धूप फैली थी। आज पूर्णिमा थी और यह आखिरी मंजिल थी। हृदय उल्लास और उमंग से उछल पड़ता था। रास्ते की थकान और परेशानी से पिछले दिन जो उदासी-सी छाई थी वह दूर हो गई थी और उसका स्थान प्रसन्नता के वातावरण ने ले लिया था।

पंचतरणी से चले तो रास्ता नदी के किनारे-किनारे था, और शुरू में कठिन प्रतीत नहीं होता था। अमरनाथ केवल चार मील था और हम लोगों को ऐसा लगता था कि अब पहुंचे, अब पहुंचे, लेकिन वस्तुतः मंजिल उतनी सरल न थी।

थोड़ा आगे निकलने पर मार्तण्डजी ने आवाज दी। बोले, "जरा पीछे तो देखिये। उस अलौकिक दृश्य को मैं अपने जीवन

मे कभी नही भूल पाऊगा। दो सूखे पर्वतो के बीच बर्फ से ढका एक महान पर्वत था, जो उस पर्वत-शृखला का मुकुट-सा प्रतीत होता था। उसे देखते-देखते तृप्ति नही होती थी। मेरे पास केमरा था, पर सूर्य का रुख अनुकूल न था। अत फोटो तो न ले सका, पर हम लोग आगे बढते जाते थे और पीछे मुड-मुडकर उस अपूर्व दृश्य को देखते जाते थे। जी अघाता न था।

सिन्ध नदी काफी दूर तक साथ गई। रमजान ने कहा था कि पचतरणी के बाद अमरनाथ तक बर्फ-ही-बर्फ मिलेगी। पचतरणी से कुछ ही फासले पर हमे बर्फ पर होकर चलना पडा। रोमाच हो आया, पर टट्टुओ के कदम इतने सधे थे कि वे खटाखट पार कर गये। एकाध जगह दो-एक घोडे कुछ फिसले भी, पर सभल गये।

पचतरणी से कुछ आगे चलकर पहले भैरो घाटी आई। टेढे-मेढेपन और ऊबडखाबड के लिए हम लोग पिप्सूघाटी और कुट्टाघाटी तथा उचाई के लिए महागुनस को भुगत चुके थे, लेकिन यह घाटी तो खतरे मे सबसे बाजी मार ले गई। चढाई आरभ होते ही टट्टूवालो ने कहा, "अब आप लोग उतर पडिये। टट्टू छोड दीजिए।" टट्टुओ पर बैठे-बैठे ही हम लोगो ने ऊपर जो निगाह डाली तो रोगटे खडे हो गये। इसलिए नही कि उचाई अधिक थी, बल्कि इसलिए कि रास्ता बडा ही ढलवा और फिसलना था और पहाड बलुआ था।

ऊपर उचाई पर कई यात्री जा रहे थे। वे और उनके पीछे चलने वाले टट्टू खिलौने जैसे प्रतीत होते थे। बनिहाल की घाटी जब हम लोगो ने पार की थी तब भी कुछ ऐसी ही अनुभूति हुई थी। दूर की मोटरे, खिलौने सरीखी लगती थी और उनका नाम विनोद मे सुधीर ने 'चाबी की मोटरे' रख दिया था। लेकिन दोनो मे एक अतर था। वहा हम लोगो की जान गाडी चलाने वाले ड्राइवर के हाथ मे थी, लेकिन यहा तो अपनी जान की

जिम्मेदारी अपने पर या भगवान् पर थी । यहा मनुष्य स्वय अपना ही चालक था, लेकिन रक्षक भगवान् था ।

सिन्ध नदी अनासक्त भाव से वहती दीख पड रही थी । जाने कितने यात्री अवतक उस मार्ग से गुजर चुके है, जाने कितने आगे गुजरेगे । उनकी घवराहट को देखकर यदि वह भी घवरा जाय तो कहा ठिकाना लगेगा ! वह तो मानो कहती थी

"आदमी आवे, चाहे जावे,
लेकिन मै तो सदा-सर्वदा इसी प्रकार वहती रहूगी ।"

सच भी है । जीवन का अर्थ गति है, गतिहीनता का अर्थ है मृत्यु । धीर-गभीर गति से वहती हुई सिध यात्रियो को यही सदेश दे रही थी ।

हम लोगो ने टट्टू छोड दिये, लेकिन हठी सुधीर नही माना। वह टट्टू पर से उतर तो पडा, लेकिन टट्टू को उसने नही छोडा। उसकी लगाम पकडकर खीच कर ले चला। हम लोगो ने उसे समझाया, पर उसने किसी की एक न सुनी और आगे वढता चला गया । हम लोग भी सावधानी से पैर रखते-रखते आगे वढने लगे । मोड इतने अधिक और इतने ढलवा थे कि कही-कही दिल दहल जाता था । हम लोग ज्यो-ज्यो ऊपर चढते जाते थे, नदी की उपत्यका उतनी ही गहरी होती जाती थी । नीचे देखने मे डर लगता था । पठानकोट से जाते समय रामवन से आगे काफी दूर तक ऐसा ही रास्ता पडा था, लेकिन वहा की उचाई और यहा की उचाई मे काफी अतर था । दूने से भी अधिक का समझिये । यहा हम लोग करीव १२ हजार फुट पर थे ।

हमारे हाथ मे लाठिया थी, जिनके नीचे लोहे की नुकीली कीले लगी थी, जो धरती मे जम कर फिसलने से वचाने मे सहायक होती थी । उन्ही के सहारे धीरे-धीरे हमारी टोली आगे वढती जा रही थी ।

वीच-वीच मे रुककर हम लोग पीछे देख लेते थे । पचतरणी

की वह हिममडित मुकुट जैसी पर्वत-माला अब भी उतनी ही भव्य और आकर्षक दिखाई देती थी।

तीन-चौथाई घाटी पार कर पाये होगे कि देखते क्या है कि सामने से एक सज्जन अकेले वापस आ रहे है। पास आकर देखा तो हम लोगो के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। यह तो पहलगाम मे मिले वही डाक्टर थे, जिनके प्रोत्साहन ने हम लोगो को असीम साहस और बल प्रदान किया था और हमने यात्रा का निश्चय किया था।

हमे देखते ही डाक्टर मुस्कराये। उनका चेहरा बहुत ही थका था और शरीर भी शिथिल-सा हो रहा था। बोले, "हमारा तबीयत बहोत बिगड गया है। हम ऊपर नही जा सकता।"

मैने कहा, "डाक्टर!"

वह बोले, "आप जाय! हम नही जा सकेगा। हमको हाईब्लड प्रेशर है। हमारा हार्ट (दिल) ।"

उनकी विवशता को अनुभव करते हुए भी मैने कहा, "डाक्टर, अब तो यात्रा का अत है। थोडी हिम्मत और कीजिए।"

बडे अनुराग से आभार प्रकट करते हुए डाक्टर ने कहा, "आप लोग जाइए और अच्छी तरह से दर्शन कीजिए।"

मेरी आखे छलछला आई। टोली के सब लोगो के हृदय विचलित हो गये। डाक्टर ठेठ दार्जिलिग से आये थे, हजारो मील का रास्ता तय करके अमरनाथ के दर्शन करने, लेकिन इतने निकट आकर भी अमरनाथ के दर्शन से वञ्चित रह गये। उनके दिल मे इसका मलाल अवश्य रहा होगा, पर उन्होने प्रकट नही होने दिया।

हम लोग आगे बढे। इस घटना से मन भारी-सा हो गया।

ऊपर से कुछ यात्री और कुछ टट्टू आते हुए दिखाई दिये। रास्ता बहुत सकरा होने से हम लोगो को लगा कि टट्टुओ का जरा-सा धक्का लगा कि नीचे पाताल मे पहुचेगे, लेकिन टट्टू

वालो ने एक सुविधाजनक स्थान पर उन्हे रोक लिया था, जिससे हम लोग निरापद निकल जाय।

जैसे-तैसे भैरो घाटी पार हुई। यह अतिम घाटी थी। आगे उतार-चढाव आये, लेकिन वे इतने खतरनाक न थे। हा, एक स्थान ऐसा अवश्य आया, जहा से गुजरते समय रोमाच हो आया। रास्ता छोटा-सा तो था ही। इसपर भी एक जगह एक वडा-सा पत्थर रास्ते मे निकला हुआ था। उससे बचकर निकलने मे मुश्किल से एक फुट रास्ता रह गया होगा। टट्टू का जरा-सा पैर टकराता या चूक जाता तो जो बीतती उसकी कल्पना सहज ही नही की जा सकती।

अब आगे बर्फ-ही-बर्फ दीख पडने लगी। अमरनाथ की घाटी, यहा से वहा तक फैली थी। दृश्य अपूर्व थे। प्रकृति हँसती थी। आदमी का दिल उल्लास से बासो उछलता था। टट्टूवालो ने दूर एक पहाड की कदरा की ओर इशारा करते हुए कहा, "वह ह अमरनाथ की गुफा।" हमने ध्यान से देखा, पर निश्चित स्थान का अनुमान न कर सके। फिर भी शरीर मे स्फूर्ति आ गइ और ऐसा लगा कि टट्टू भी अब तेज चलने लगे है, मानो दर्शनो क लिए हमारी भाति वे भी आतुर हो।

रास्ते मे यहा-से-वहा तक बर्फ बिछी थी। गैल बर्फ से ढकी थी और हम लोगो को कई स्थानो पर दूर तक बर्फ पर होकर गुजरना पडा।

सुधीर अपने टट्टू को तेज दौडाये जा रहा था। बीच मे ललिताबहन की डाडी खाली चल रही थी। इसलिए कुछ दूर को सुधीर और कुछ दूर को अन्नदा उसपर सवार हो गये थे, लेकिन डाडी के लोग तो अपनी रफ्तार से चलते है, जब कि टट्टू की लगाम अपने हाथ मे होती है। गति का उसमे अनुभव होता है। अत थोडी देर बाद दोनो फिर अपने-अपने टट्टुओ पर सवार हो गये। ज्यो-ज्यो अमरनाथ निकट आ रहा था, सुधीर अपने

हाथ की पतली सटी से टट्टू को कभी मार कर तो कभी धमका कर अपनी तीव्रतम गति से चलने को बाध्य कर रहा था। उसके पीछे मै था। बाद मे शेप लोग। सभी को अमरनाथ पहुचने की जल्दी थी।

हमारी टोली अब बार-बार 'अमरनाथ की जय' बोलती थी। भाभी या सुधीर एक साथ तेजी से चिल्लाते, "बोलो अमरनाथ की   "

और हम सब समवेत स्वर मे कहते, "जय।"

पर्वतो के प्रति मेरे मन मे हमेशा से आकर्षण रहा है। पर्वतो को देखकर मै सबकुछ भूल जाता हू और उनकी विराटता के आगे मेरा मस्तक नत हो जाता है। यहा पर्वतराज के दर्शन कर ऐसी धन्यता अनुभव होती थी, जैसी पहले शायद ही कभी हुई हो। पेडो का यहा भी नामोनिशान नही है, न कही बस्ती है, न कही आदम, न आदमजात। लगता है, जैसे सृष्टि के आदिकाल मे पहुच गये है, जब मनुष्य अकेला था, नितात अकेला और निरुद्देश्य इधर-उधर भटका करता था।

जाने क्या-क्या विचार उस समय मन मे आते और जाते रहे। समूची टोली उस भयोत्पादक विराट सौदर्य से कुछ इतनी अभिभूत हो गई थी कि उसकी अभिव्यक्ति के लिए हमारे पास शब्द नही रह गये थे। नीचे मार्ग मे बर्फ, पर्वतो पर बर्फ, ऊपर नीलाकाश, जिसके मध्य सूर्य देवता अपने पूर्ण वेग से चमक रहे थे।

: १४ :

जय अमरनाथ!

आखिर अमरनाथ पहुच गये। सबसे पहले सुधीर पहुचा। गुलाम नबी तथा उसका एक साथी सीधे रास्ते से निकल कर

वहा पहुच कर हमारी राह देख रहे थे। अन्य अनेक यात्री भी वहा आ गये थे। कुछ गुफा मे पहुच गये थे, कुछ चढाई पर थे।

गुफा से पहले कुछ गज दूर, अमरावती गगा बहती थी। इसके जल मे सफेद रग की मिट्टी होती है, जो पवित्र मानी जाती है। यात्री उसे प्रसाद के रूप मे साथ लाते है। इस नदी मे यात्री स्नान करते है और तब अमरनाथ के दर्शन को ऊपर जाते है।

हमारी पार्टी मे से मार्तण्डजी और भाभी ने अमर गगा मे हाथ-पैर धोये और आचमन किया। सरदी के डर से तथा पता न होने से साथ मे कोई कपडा नही रखा था कि जिसे पहन कर स्नान करते। मार्तण्डजी ने बताया कि पानी पचतरणी जैसा ठडा नही था और अगर कपडे होते तो मजे मे नहाया जा सकता था। दो-एक पजाबी और एक बगाली महाशय स्नान कर रहे थे।

हम लोग टट्टू से उतर कर गुफा की ओर बढे। वैसे उचाई अधिक नही थी, पर सास उखाड देने वाली थी। बीच मे सास के लिए रुकते हुए हम गुफा मे पहुचे और वहा जो देखा, आखे उस पर सहज विश्वास न कर सकी। १२७२९ फुट की उचाई पर इतनी विशाल गुफा की कल्पना कौन कर सकता था ? गुफा की लम्बाई ५० फुट, चौडाई ५५ फुट और ऊचाई ४५ फुट है। पहलगाम से यहा तक इतने पहाड मिले थे, लेकिन उनमे कही भी छोटी-वडी एक भी कन्दरा देखने मे नही आई थी। तब किस अदृश्य शक्ति ने यहा इतनी विशाल गुफा का निर्माण करके उसे देश-विदेश के यात्रियो के आकर्षण का केन्द्र बना दिया ? कन्दरा की गोलाकार महराव को देखकर वडे-से-वडा कारीगर भी आश्चर्यचकित रह जायगा। प्रकृति की इस महान कारीगरी के आगे मानव-कृति तो पानी ही भरेगी। कन्दरा का मुह चौडा है। थोडी छत है। तत्पश्चात पीछे पत्थर की ऊवड-खावड दीवार-सी है। अदर दाये कोने की दीवार मे एक वडा गोल-सा कोना

है। कहते है कि इसी स्थान पर नीचे से उठकर शिवलिग निर्मित होता है। उसके सामने एक ओर को पार्वती और उनके निकट गणेश की हिम-मूर्तिया बनती है । जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, हम लोग वहा एक मास देर से पहुचे थे। इसलिए शिवलिग के स्थान पर बर्फ की एक समतल चौकी-सी दिखाई दी। पार्वती और गणेश की मूर्ति के स्थान पर भी थोडी-सी बर्फ पडी थी। हम लोग मुग्ध, आदर-भाव से उस समूची कला-कृति को निरखते रहे। एक बगाली बहन बडे ऊचे स्वर मे स्तुति-पाठ कर रही थी और उनके कण्ठ के माधुर्य और भक्ति-विह्वलता ने वहा के वायुमण्डल को बडा ही पुनीत बना दिया था।

हम लोगो ने जूते बाहर ही उतार दिये थे, लेकिन जमीन मे ठड इतनी अधिक थी कि पैर सुन्न होने लगे। तब मार्तण्डजी और भाभी को छोडकर, हम सबने रस्सी के जूते पहन लिये, जिन्हे हम पहलगाम से साथ लाये थे। फिर भी ऐसा जान पडता था मानो पैर कट जायगे।

गुफा इतनी बडी है कि सैकडो व्यक्ति उसमे आसानी से ठहर सकते है। गुफा का ढाल ड्योढी की ओर है और उसके ऊपर बहुत ऊचा पहाड है। काश्मीर सरकार ने यात्रियो की सुविधा के लिए थोडे-थोडे फासले-पर लोहे की एक रेलिग बनवा दी है, जिससे दर्शनार्थी अच्छी तरह, बिना भय के यहा ठहर कर दर्शन कर सके। गुफा के नीचे तथा दाए-बाए गर्मी मे काफी बर्फ रहती है, लेकिन कहते है कि गुफा के ऊपर पर्वत पर बर्फ देखने मे नही आती। छत मे से टपटप पानी गिरता रहता है और शायद उसीके कारण ये हिमाकृतिया बनती है। यहा के पहाड एकदम सूखे है। उन पर हरियाली का नाम तक नही है।

शिवपिडी ही अमरनाथ महादेव कहलाती है और इसीकी पूजा के लिए दूर-दूर से यात्री आते है। हमे बताया गया कि आषाढ का चन्द्रमा ज्यो-ज्यो पूर्ण होता जाता है, शिवलिग बढता

जाता है और श्रावणी पूर्णिमा को वह पूरा वन कर तैयार हो जाता है। अनतर ज्यो-ज्यो चद्रमा की ज्योति क्षीण होती जाती है, शिवलिंग भी घटता जाता है और अमावस्या के दिन वह वर्फ का समतल ढेर-मात्र रह जाता है। वस्तुत ससार के महान आश्चर्यो मे से वह एक है, क्योकि बरसो से यह क्रम चला आ रहा है और कोई भी पता नही चला सका कि यह कैसे और क्यो होता है।

हमने सुन रक्खा था कि यही गुफा मे कबूतरो की एक जोडी रहती है। दर्शन करने के बाद छत की ओर निगाह गई तो देखते क्या है कि एक छोटे-से हिस्से मे दो कबूतर वैठे है। जहा जीवजन्तु का नाम नही, वहा दो कबूतर क्यो और कैसे रहते है, वहुत सोचने पर भी यह बात समझ में नही आई। जब वहा का रास्ता बद हो जाता है, तब भी क्या ये कबूतर यहीं रहते है ? उस समय खाते क्या होगे ? जहा शीत इतनी है कि सबकुछ जम जाता है, इनकी रक्षा कैसे होती होगी ? ये और ऐसे ही और बहुत-से प्रश्न मन मे उठे, लेकिन उनका उत्तर कौन देता ! मानव-बुद्धि विलक्षण है और जहा कोई नही पहुच सकता, वहा वह पहुच जाती है, लेकिन कुछ ऐसे भी अवसर आते है, जब यही मानव-बुद्धि चमत्कृत हो जाती है और उसकी गति जडवत् हो जाती है।

गुफा मे सरनदास उदासीन नाम के एक साधु मिले। वह कम्वल का चोगा पहने थे और उनके सिर और दाडी-मूछो के वाल वढे हुए थे। उनसे बातचीत होने लगी। उन्होने वताया कि वह पजाब से आये है और चार महीने से वही रहते है। मैने पूछा कि आगे क्या विचार है ? वोले, "मै पूरे साल यहा रहना चाहता हू।"

"जाडो मे भी ?"

"हा।"

"ठण्ड से कैसे वचेगे ?" मैने पूछा।

वोले, "मै चाहता हू कि कही से पचास मन कोयले का प्रबध

हो जाय तो मै वडे आनद से इस वार की सर्दी यही रह कर विता सकता हू ।"

मुझे विश्वास नही हुआ । जहा सितम्वर मे ही इतनी सर्दी थी कि हाथ-पैर गले जाते थे, वहा जनवरी मे क्या हाल होगा ?

वावा सरनदास ने स्तुति-श्लोक वोले । हम सवने पूजा की और नारियल चढाये । परिक्रमा की । परिक्रमा करने लगे तो मेरा हृदय गद्‌गद्‌ हो गया ।

सत सरनदास से हम लोगो ने वहुत-सी वाते पूछी, लेकिन वे अधिक कुछ नही बता सके । इतना उन्होने अवश्य वताया कि जब से वह यहा आये है, कबूतर वरावर वने है और शिवलिंग उन्होने पूरा देखा है । पार्वती और गणेश की मूर्त्तियो के भी उन्होने वडे भव्य रूप मे दर्शन किये थे, लेकिन वह यह नही वता सके कि सवसे पहले कव और किस व्यक्ति ने इस तीर्थ की खोज की थी । टट्‌टूवाले ने वताया कि कोई मलिक नाम का मुसलमान था, जो सबसे पहले यहा आया था । यही कारण है कि चढावे का एक हिस्सा मुसलमानो को जाता है । मलिक कव आया, इसका पता नही । कोई तीस साल से वहा टट्‌टू आने लगे है । पहले पैदल और दुर्लभ अवसरो पर डाडी मे यात्रा होती थी । श्रावणी पूर्णिमा को प्रतिवर्ष यहा मेला लगता था, जिसमे हजारो नर-नारी आते है, वैसे तो आपाढ से लेकर क्वार तक यात्री आते रहते है । यात्रियो की सख्या हजारो तक पहुच जाती है और टट्‌टू, डाडी तथा कुली भी हजारो की तादाद मे वहा जाते है ।

टट्‌टूवालो ने यह भी बताया कि कवूतरो के अलावा इस हिस्से मे कभी-कभी कौवा भी दीख पडता है, जिसकी जवान और पख लाल होते है, शेष शरीर काला । कही-कही विल्ली से कुछ वडा ट्रिन नाम का एक जानवर भी मिलता है, जो करीव वीस फुट गहरी जगह वना कर रहता है और अधिक वर्फ के दिनो मे खाने के लिए घास जमा करके भीतर रख लेता है, पर हम लोगो

को तो उनमे से किसी के भी दर्शन नही हुए।

हम लोग गुफा पर कोई पौने दस पर पहुचे थे। घटे भर रहे। दृश्य इतना भव्य, शात और मनोहारी था कि वहा से हटने की इच्छा नही होती थी, लेकिन टट्टू वाले जल्दी मचा रहे थे। वार-वार कहते थे कि धूप मे वर्फ पिघलना शुरू हो जायगा तो मुसीवत हो सकती है। इसलिए बर्फीले रास्ते को जल्दी-से-जल्दी पार कर ले तो अच्छा है।

वावा सरनदास हमे अपनी जगह पर ले गये, जो उन्होने उसी गुफा मे एक ओर को वना ली थी। उसमे उनकी आवश्यकता की थोडी-वहुत वस्तुए सचित थी। उन्होने हमे प्रसाद के रूप मे भस्म दी, जो उन्होने नीचे नदी से लाकर वहा इकट्ठी कर रक्खी थी और कुछ किशमिश, मिश्री आदि का प्रसाद भी। आदमी मामूली जान पडे। स्वस्थ भी अधिक नही थे। पता नही, वहा रह पायगे या नही!

गुफा मे थोडी देर और चक्कर लगा कर हम लोगो ने उसके प्रत्येक भाग को भली प्रकार देखा। उसकी विशालता का अनुभव कर वार-वार आश्चर्य होता था।

स्थान इतना शात और वायुमण्डल इतना सुखद है कि यात्री रास्ते के सारे कष्टो को भूल जाता है। दुनिया का कोलाहल वहा नही है, वहा की निस्तब्धता और जनाकीर्णता मे ऐसा कुछ है, जो आदमी के हृदय को सुख देता है और उसे उस कृतार्थता की अनुभूति कराता है, जो मनुष्य को अपने जीवन मे वहुत कम अनुभव होती है। अधविश्वासो मे मेरी आस्था नही है और न हजारो-लाखो व्यक्तियो की भाति मुझमे अध-श्रद्धा ही है, पर अनेक अवसरो पर अनुभव होता है कि जीवन मे श्रद्धा वहुत वडी चीज है और मानव को जितनी शक्ति विवेक से मिलती है, उससे कही अधिक वल कभी-कभी श्रद्धा से प्राप्त होता है।

हम लोगो ने एक वार फिर उस सारी गुफा पर निगाह डाली, हिम-पुज को देखा, जय वोली और प्रणाम करके चल पडे।

: १५ :

कैलास-दर्शन

गुफा से निकल कर बाहर आये और थोडी देर रुक कर गुफा को बाहर से देखने लगे। देखते-देखते हम लोगो की दृष्टि दूर, वहुत दूर, वाईं ओर के एक पर्वत पर गई, जिसके ऊपर बर्फ-ही-बर्फ जमी थी और कई वादल के टुकडे चक्कर लगा रहे थे। सूर्य की सुनहरी किरणो के मेल से वह दृश्य इतना सुन्दर लग रहा था कि हम लोगो की निगाह बरवस वहा टिक गई। हमे बताया गया कि वह कैलास है। भारत के महानतम तीर्थो मे कैलास की गिनती होती है और वहुत-कुछ प्रयत्न करने पर भी कम ही लोग वहा पहुच पाते हैं। उसके इतने भव्य रूप मे दर्शन करके हृदय को वडा आनद प्राप्त हुआ। हम लोग एक तीर्थ के दर्शन करने आये थे, दो के हो गये।

कैलास वहा से काफी दूर है और वहा जाने का रास्ता भी दूसरा है,लेकिन उसकी उचाई दूर से ही यात्रियो को उसके दर्शन का लाभ दे देती है। श्रीनगर से गुलमर्ग जाते हुए रास्ते मे बस से और फिर खिलनमर्ग पर पहुच कर नगापर्वत की हिमाच्छादित माला के दूर से ऐसे ही दर्शन हुए थे। लगता था, मानो वह माला हमसे कुछ ही दूरी पर हो। कैलास को देखकर भी यह नही लगा कि वह हमसे दूर है।

पर्वतराज हिमालय भारत का ही नही, विश्व का एक गौरव है। स्थान-स्थान पर उन्होने वडी उदारतापूर्वक अपने सौंदर्य का दान किया है। कही से भी हिमालय के दर्शन कर लीजिये, आपका हृदय आनद से गद्गद् हो जायगा। गगोत्री जाइए, यमुनोत्री जाइए, वदरीनाथ जाइए, मान-सरोवर जाइए, अमरनाथ जाइए, केदारनाथ जाइए, एवरेस्ट

जाइए, कैलास जाइए, गिरिराज की भव्यता आपके हृदय को बिना मोहे नही रह सकती। उसके हृदय से जाने कितनी नदिया और प्रपात निकले है, उसकी गोद मे जाने कितने प्रकार के वृक्ष खडे है, उसके आगन मे जाने कितने पशु-पक्षी स्वच्छन्द विचरण करते है, उसके हिममडित शिखर जाने कितने यात्रियो को वहा खीच लाते है। हिमालय निस्सदेह सौदर्य, विस्मय और भव्यता का आगार है।

हम लोगो की दृष्टि कैलास पर से हटती नही थी। उसकी रमणीकता को देखकर मस्तिष्क किसी पुराने युग मे चला गया था, जब शकर भगवान वहा तप करते थे। ऐसा प्रतीत होता था कि अपनी साधना के अनुरूप ही उन्होने उस स्थान का चुनाव किया था।

अलमोडा की ओर से कैलास लगभग २५० मील पडता है, लेकिन कहते है कि कोई हिम्मत करके इधर से सीधा जाय तो वह केवल ८० मील है।

कैलास के दर्शन कर मन मे अनेक प्रकार के विचार उठे। भगवान राम ने अयोध्या को, कृष्ण ने ब्रज को, बुद्ध ने कपिलवस्तु को, महावीर ने कुण्डलपुर को और गाधीजी ने पोरबदर को अमर बना दिया। भगवान शिव ने भी अपनी कठोर तपस्या से कैलास को भारत के लोकजीवन मे वह स्थान प्रदान किया जो युग-युगान्तर तक अक्षण्ण रहेगा।

अमरनाथ की गुफा कुछ ही गज के फासले पर थी, कैलास मीलो दूर था, लेकिन ऐसा लगता था, मानो दोनो एक-दूसरे के पार्श्व मे खडे हो। दोनो का सौदर्य अलौकिक था, दोनो के दर्शन से आखे तृप्त नही होती थी।

हम लोगो ने निश्चय किया था कि रात को वायुजन मे ठहरेगे। वहा पहुचने के लिए हमे सोलह मील का मार्ग पार करना था। अनिच्छापूर्वक हमने बारी-बारी से अमरनाथ और कैलास

से विदा ली, अमरनाथ महादेव की जटा मे से निकली अमरावती गगा को प्रणाम किया, महिमामयी प्रकृति को सिर झुकाया और वहा की स्मृतियो की अमिट छाप हृदय पर लेकर वापस लौटे।

: १६ :

वापसी

अमरनाथ से चले तो हृदय इतना अभिभूत था कि वाणी मौन हो गई थी। टट्टुओ पर सवार होने के पूर्व हम लोगो ने खूब जोर से अमरनाथ का जयघोष किया था। उसके वाद वाचा मूक और दृष्टि आत्मस्थ हो गई। वोलने के लिए शव्द ढूढने पडते थे। लेकिन शीघ्र ही हम लोग सुस्थिर हो गये। अमरनाथ को जाते समय जिस सौदर्य को पीठ-पीछे छोड गये थे, वह अव सामने था। अमरावती साथ-साथ चल रही थी। अमरनाथ की घाटी का नया रूप देखकर दिल वाग-वाग हो गया। जव हमारी टोली अपने-अपने टट्टुओ पर एक-एक करके वर्फ से गुजरी तो रोमाच हो आया। अमरनाथ जाते समय जव उसे पार किया था तो मन अमरनाथ पर केन्द्रित था, लेकिन अव वह वात नही थी और हम तटस्थ भाव से प्रत्येक दृश्य का आनद ले सकते थे।

अमरनाथ की घाटी पार करते ही दूर से पचतरणी का मुकुटधारी पर्वत दीख पडने लगा। मार्तण्डजी वार-वार कहते थे, "चित्र ले लो।" मेरी भी इच्छा होती थी कि लू, लेकिन दुर्भाग्य से मेरा फिल्मो का स्टाक खत्म हो गया था और आखिरी वची फिल्म से अमरनाथ की घाटी का चित्र ले लिया था। मार्तण्डजी को इस वात का वडा खेद रहा कि हम लौटते मे इन दृश्यो के चित्र न ले सके। मुझे भी वडा मलाल रहा, लेकिन हो भी क्या सकता था।

मेहरबानी की क्या बात है। हमसे जो हो सकेगी, वह मदद जरूर करेगे।

टट्टू वालो ने तम्बू भी उखाडकर बाध लिये थे। जो थोडा बहुत सामान, बर्तन आदि खुले थे, वे समेटे और टट्टुओ पर लाद कर चलने की तैयारी की। अब तो मन मे यह था कि कब वायुजन पहुचे और कब पहलगाम। इतनी भयकर यात्रा की थकान तो होनी ही थी। मजिल तक जाने मे जोश रहता है, मजिल पर पहुचने के बाद थकान आती है।

पचतरणी से अष्टनमर्ग और हत्यारा तालाब होकर एक और मार्ग है, जो चदनवाडी पहुचाता है, लेकिन १९२८ की दुर्घटना के बाद उसे बद कर दिया गया। दुस्साहसी लोग ही अब उस रास्ते आते-जाते है। भयकर होने के साथ-साथ वैसे वह बडा रमणीक बताया जाता है। जगह-जगह हरियाले मैदान आते है और कलकल-निनाद करते झरने मिलते है। इसलिए प्रकृति-प्रेमियो के लिए आज भी उस मार्ग का महत्व है। पचतरणी से दो मील तक तो यही रास्ता रहता है। उसके बाद एक ओर को मुड जाता है। पाच मील चलने पर हत्यारा तालाब आता है। यहा १९२८ मे बहुत से यात्रियो की मृत्यु हो जाने के कारण इसका नाम 'हत्यारा तालाब' पड गया। वह एक विशाल झील के समान है। उसके चारो ओर ऊचे-ऊचे हिमाच्छादित पर्वत है। यहा से थोडी चढाई के पश्चात उतराई आती है। यह उतराई बडी कठिन बताई जाती है। कुछ आगे चलकर अष्टनमर्ग स्थान आता है। प्राकृतिक दृश्यो की दृष्टि से इस स्थान का अपना महत्त्व है। अष्टनमर्ग से चदनवाडी कुल सात मील है। हम लोगो ने नये रास्ते का खतरा उठाना पसद नही किया और परिचित मार्ग से ही लौटे।

महागुनस पहुचकर हम लोगो ने टट्टू थोडी देर विश्राम करने के लिए छोड दिये। एक जगह बैठकर विनोद कर रहे थे कि इतने मे विष्णुजी की टोली भी आ गई। सब साथ हो गये।

विष्णुजी वहुत प्रसन्न थे। ललितावहन तो पहले ही से प्रफुल्लित थी। उनकी टोली के शेष सदस्य भी खुश थे और खूब चहक रहे थे। उन्होने वताया कि अमरावती गगा मे स्नान करके तव उन्होने दर्शन किये थे। मैंने कहा, "आपने तो हम सबसे ज्यादा लाभ लिया।"

इधर से हम लोगो ने यह घाटी मेह मे पार की थी और कैसी मुसीवत हुई थी, यह पाठक पढ ही चुके है। अव मौसम एकदम साफ था। मुझे मजाक सूझा। मैंने चिल्लाना शुरू किया, "जयशभो, जय शभो!" सब लोग जोरो से हस पडे। सारा वायुमण्डल हँसी से गूज उठा। इसी प्रकार विनोद करते और हँसते-हँसाते हम शाम को पाच बजे के लगभग वायुजन पहुचे। वहा के रेस्ट हाऊस को पहले से ही रिजर्व करा लिया था, लेकिन वहा पहुचकर देखते क्या है कि दो-तीन परिवारो ने उसके अधिकाश भाग पर कब्जा कर लिया है। एक छोटा-सा कमरा खाली वचा था। विष्णुजी और ललितावहन ने आग्रह किया कि हम सव लोग साथ-साथ ही ठहरे। फर्श पर नीचे बिस्तर कर लेगे। आखिर एक रात की ही तो वात है, लेकिन हम लोगो को वह ठीक न लगा। इसमे उन लोगो को वडा कष्ट होता, क्योकि हम आठ जने थे और वे भी १०-११ जने थे। छोटे-से कमरे मे गिच-पिच रहने की अपेक्षा खुले मे रहने के खयाल से हम लोग दूसरी ओर बने वैरकनुमा मकानो मे चले आये। वे थे तो वडे गदे। आखिर एक को पसद किया और टट्टूवालो की मदद से उसे साफ कराया। फिर चटाइया विछाकर विस्तर लगाये। सबसे पहले चाय का प्रवध किया गया। उसके वाद भोजन का डोल जमा। सरदी तेज थी। पहले वता ही चुके है कि यहा हवा के कारण सर्दी कुछ अधिक होती है। अन्नदा जाडे के मारे कापने लगी। उसके लिए कागडी मे आग जलाकर दी और बाद मे कागडी को उसकी रजाई के भीतर रख कर विस्तर गरम किया। भोजन वना, लेकिन खाया कुछ नही गया। १६ मील का थका देने वाला

सफर था। कुछ लोगो को उचाई की वजह से सास की तकलीफ फिर हो गई थी। भोजन से निबट कर सोने की तैयारी की।

इधर से जाते हुए घने कोहरे के कारण वहा की उस पर्वत-शृखला के अच्छी तरह से दर्शन नही कर पाये थे, जिसकी तीन चोटिया ब्रह्मा, विष्णु और महेश के नाम से प्रसिद्ध है। अब लौटते समय साझ हो चुकी थी। फिर भी बर्फ से ढकी उन तीनों चोटियो की धुधली झाकी से ही मन उछल पडा। रात को ठीक से नीद नही आई। इस बार आदर्श को सास लेने मे ज्यादा कष्ट हुआ। रात मे दो-तीन बार वह बाहर खुली हवा मे सास लेने गई। विट्ठलजी ने ठड से बचाव का बढिया उपाय निकाला। रबड़ की थैली मे गरम पानी भरकर बिस्तर मे रखकर सो गये।

सबेरे उठे तो शेषनाग-झील पर उगते सूर्य का प्रतिबिम्ब बडा सुहावना लग रहा था और ब्रह्मा, विष्णु, महेश की चोटियां साफ दीख पड रही थी। सब लोग निवृत्त हुए। चाय-नाश्ते की तैयारी शुरू हुई। रात को टट्टूवालो ने बताया कि अमरनाथ से लौटते हुए रास्ते मे एक बहन टट्टू से गिर गई। उनकी बाह टूट गई है। सबेरे उन्हे देखने गये। उनके साथ और भी कई लोग थे। बहन डाडी मे बैठी थी और उनके चेहरे पर बडी वेदना थी। सयोग की बात देखिये कि दार्जिलिंग के बगाली डाक्टर यहां भी मौजूद थे और रात को ही आकर उन्होने उन बहन को यथा-सभव प्राथमिक चिकित्सा एव सहायता दे दी थी। सवेरे जब हम उन बहन के पास गये तो सामने उन्ही डाक्टर को देखकर मेरा जी भर आया। सेवा के अवसर पर यह कैसे हो सकता था कि वह चूक जाते।

८ बजे तक हम लोग नाश्ता करके तैयार हो गये और आगे को चल दिये। सुबह का समय था। इसलिए कुछ दूर तक पैदल चले, फिर टट्टुओ पर सवार हो गये।

शेषनाग की झील वही थी, उसके चारो ओर हिमाच्छादित पर्वत वही थे, शेषनाग नदी उसी गति से बह रही थी, लेकिन अब उनका सौदर्य उतना आकर्षक प्रतीत नही होता था, जितना जाते समय लगा था। अमरनाथ के अद्भुत दृश्य आखो मे बसे थे न ! वर्फ पर चल चुके थे, तब दूर की बर्फ को देखकर अब क्या रोमाच होता ?

आगे कुट्टाघाटी आई। वहा बगाली डाक्टर की टोली टट्टुओ से उतर गई थी और घाटी को पैदल पार कर रही थी, पर हम लोग टट्टुओ से नही उतरे। आगे चलकर एक दृश्य सचमुच ऐसा आया कि उसे देखकर रोमाच हो गया, सारा शरीर भय से काप उठा। मालक अपने टट्टू पर बैठे चुपचाप घाटी मे उतर रहे थे। अचानक एक मोड आया और उनका टट्टू एकदम रास्ते के विल्कुल किनारे रुक कर खडा हो गया। यदि दो इच उसका पैर इधर हो जाय तो धडाम से नीचे शेषनाग नदी मे। मालक का चेहरा फक। पीछे से आया सपाटे से मार्तण्डजी का उत्पाती टट्टू। मालक जानते थे कि वह मुह मारने की अपनी आदत से बाज नही आता है। वह मूर्त्तिवत् बैठे-बैठे ही चिल्लाये, "मार्तण्डजी, अपने टट्टू को सभालना।" मार्तण्डजी ने पहले ही उस नाजुक स्थिति को देख लिया था और सावधान थे। उनका टट्टू भागता हुआ आया और मालक के टट्टू के पास से निकल गया। भगवान की दया से उसने अपना मुह नही चलाया। जरा देर वाद मालक का टट्टू स्वय ही आगे वढ गया। मालक ने और हम लोगो ने चैन की सास ली। मैंने चिल्लाकर पूछा, "मालक, हाऊ आर यू ?" जवाव मिला, "क्वाइट वैल।"

जोजपाल पर आये तो रात के वर्षा और ओलो की याद करके शरीर एकवारगी सिहर उठा। कैसी वीती थी उस रात को ! लेकिन वह घटना अव कष्ट नही, मनोरजन का विषय वन गई थी।

इतनी दूर बाद यहा फिर हरियाली देखने को मिली। परिवर्तन हुआ। आगे पिस्सूघाटी तक बराबर भोजपत्र का जगल था। शेषनाग के किनारे के हरे-भरे दृश्य बडे सुहावने लगे। अब दाईं ओर के पर्वत सूखे थे, बाईं ओर हरियाली-ही-हरियाली थी।

आगे चौपानो का मुकाम आया। भेडे आज भी बहुत बड़ी सख्या मे थी और उनमे से अधिकाश निश्चेष्ट-सी एक-दूसरे पर गर्दन टिकाये बैठी थी। कुछ भेडे इधर-उधर मटर-गश्ती भी कर रही थी। उनके बीच बडे बालो वाला एक बकरा शान से खडा था। उस रेवड के एक ओर होकर हम लोग आगे बढ गये।

अमरनाथ से अबतक का मौसम बहुत अच्छा था, लेकिन अब कुछ-कुछ बादल होने लगे थे। हम लोग बार-बार यही मनाते थे कि कैसे ही जल्दी-से-जल्दी पहलगाम पहुच जाय।

पिस्सूघाटी पर आकर टट्टुओ से उतर पडे और सब लोगो ने निश्चय किया कि घाटी को पैदल पार करेगे। गुलाम नबी ने बताया कि इस घाटी मे भोजपत्र बडा अच्छा मिलता है। हमने कुछ भोजपत्र इकट्ठा करना चाहा तो रमजान ने कहा कि आप लोग आगे जाइए, आपके लिए कुछ भोजपत्र गुलाम नबी ले आवेगा।

आगे निकल जाने की इच्छा से सुधीर रास्ता छोडकर नया रास्ता बनाकर चलता था। इस क्रिया मे कभी-कभी उसे थोडा उचाई से कूदना भी पडता था। इसमे डर था कि कही उसका पैर न फिसल जाय। हम लोग उसे रोकते थे, मगर वह उत्साह में किसकी सुनता था।

पिस्सूघाटी पार करते समय अचानक एक दम्पति मिल गये। युवा थे। टट्टू पर उनका पाच-छ वर्ष का बच्चा मजे मे बैठा आ रहा था। वे दोनो पैदल ही चल रहे थे। हम लोग बाते करने लगे।

उन बहन ने पूछा 'आप पहली बार आये है ?'

'जी हा। और आप ?'

'मै पहले मेले पर आई थी। अब दूसरी बार आई हू।"

'बच्चा दोनो बार साथ रहा ?'

'जी हा।'

'इसे डर नही लगता ?'

'नही. यह तो यात्रा मे बडा खुश रहता है।

'आपको मेले के समय अच्छा लगा था या अब ?"

सुनकर बहन मुस्कराई। बोली, 'मेले पर भीड़ बहुत थी। पर देखने का इस समय अधिक अच्छा मौका मिला।

मैने कुछ आश्चर्य से पूछा, इतनी कठिन यात्रा आपने दो बार कैसे कर डाली ?'

बोली मौका आवे तो तीसरी बार फिर कर सकती हू।"

मैने मन-ही-मन उन बहन के प्रकृति-प्रेम तथा धर्म-परायणता को शाबाशी दी और बच्चे के साहस को सराहा। हम तो सुबीर के साहस से ही मन मे फूल रहे थे पर उससे तीन साल छोटे इस बालक का साहस तो और भी बढकर निकला।

घाटी मे छोटे-छोटे कई प्रकार के फूल खिले थे। सुबीर ने बहुत से तोडकर हाथ मे ले लिये। बड़े अच्छे लगते थे।

बातचीत मे घाटी पार हो गई। रास्ता मालूम भी न पड़ा। इधर से जब गये थे तो यही घाटी बड़ी भयकर लगी थी और उसकी ऊबड़-खाबड़ता से टट्टुओ के गिर जाने की आशका मन मे रही थी। राम-राम करके चढे थे। आते समय मजे मे उतर आये।

पिस्सूघाटी के बाद नदी के किनारे एक भोजपत्र का पेड़ मिला। हम लोगो ने उस पर चढकर अपने नुकीले डंडो से बहुत-सा भोजपत्र छुडाया और साथ मे ले लिया।

अब हम लोग फिर टट्टुओ पर सवार होकर आगे बढ़े।

वही वर्फ का पुल आया, लेकिन उस ओर अव विशेष ध्यान न था। ठीक वारह वजे चदनवाडी पहुचे। पिछली वार की भाति आज भी यहा काफी भीडभाड थी। मर्द-औरते कही घास पर वैठे वाते कर रहे थे तो कही ताश खेल रहे थे। वच्चे किलकारिया मार रहे थे।

वायुजन से जव हम रवाना होने को थे तो हमे दो दुवले-पतले युवक मिले थे। उनके पास पहनने के कपडो के अलावा ओढने-विछाने को कुछ भी नही था। वे पैदल पहलगाम से चदन-वाडी घूमने आये थे। उनमे से एक वहुत उत्साही था। उसने दूसरे को प्रोत्साहित किया तो दोनो आगे वढकर वायुजन पहुच गये। वहा सर्दी के मारे दोनो का वुरा हाल हो गया। पहनने के भी पूरे कपडे उनके पास न थे। आखिर दो और यात्रियो ने उन पर रहम खाया और उन्हे रात को ओढने के लिए कुछ कपडे दे दिये। उनमे से एक की सास फूल रही थी और वह वार-वार वापस होने का आग्रह करता था। दूसरे का मन अमरनाथ जाने को था। हम लोगो को मालूम हुआ तो उनसे मिले। विट्ठलजी ने कहा, "आप लोग अच्छी तरह से अमरनाथ जाओ। जो चाहिए वे कपडे हम से ले लो। हम तुम्हे दो लोइया दिये देते है। इन्हे पहलगाम के गाधी आश्रम मे लौटा देना।"

पर वे न माने। उनमे से एक कहता था, "मै आगे हर्गिज नही जाऊगा। मेरी तो तवीयत खराव हो रही है।"

दूसरा कहता था, "थोडी हिम्मत करके चले चलो। कौन यहा वार-वार आता है।"

आखिर मे न जाने वाले की चली और वे दोनो वापस लौट आये।

पचतरणी मे सरदारजी के होटल के पास ही एक मदरासी महिला वैठी थी। उनका सारा मुह छिला हुआ था। पूछने पर मालूम हुआ कि वह रास्ते पर खडी थी। एक लद्दू टट्टू आया

और उनसे टकरा गया। वह तो अच्छा हुआ कि रास्ते पर ही गिर कर रुक गईं। कही जरा आगे को गिरी होती तो पाताल में पहुचती।

ऊपर की सर्द हवा के कारण हम लोगो की नाक की चमडी गई फट थी और कुछ की माथे की। सारा चेहरा स्याह पड गया था। शक्ल-सूरत से हम लोग बिल्कुल दूसरे ही आदमी बन कर लौटे थे। घर के ही लोग मिल जाते तो देखकर हँसते।

चदनवाडी मे थोडी देर रुककर सरदारजी के होटल मे भोजन किया। रोटिया, दाल, साग, सब ठीक थे, पर न जाने क्यो भोजन में वह स्वाद नही आया, जो अमरनाथ जाते समय आया था। खा-पीकर, पहलगाम पहुचने की इच्छा से, तत्काल रवाना हो गये।

चदनवाडी से पहलगाम आठ मील था। ज्यो-ज्यो हम लोग निकट आते गये, रास्ता भारी पडता गया। फिर भी कुछ दृश्य देखकर मन को वडी प्रसन्नता हुई।

५।। वजे के लगभग हम लोग पहलगाम पहुचे। सीधे गाधी आश्रम गये। श्यामलालभाई से मालूम हुआ कि उन्होने हमारे लिए नदी-किनारे तम्बू तनवा दिया ह। टट्टुओ पर ही हम लोग अपने तम्बू पर गये। टट्टुओ से उतरे, उन्हे खूब प्यार किया। टट्टुओ के साथ टोली का एक चित्र खीचा और टट्टूवालो से हाथ मिलाकर और रमजान तथा गुलामनबी को छाती से लगा कर विदा दी। चार दिन की इस कठिन और सदा याद रखने वाली यात्रा मे ये टट्टू और टट्टू वाले हमारे परिवार के एक अग-से वन गये थे। उनसे अलग होते समय मन को वडा दु ख हुआ।

इस प्रकार १० सितम्बर को प्रारभ हुई यात्रा १३ की शाम को पूर्ण हुई। साढे तीन दिन मे कुल मिलाकर ५६ मील हम लोगो ने टट्टुओ पर सवारी की। जीवन का वह अद्भुत अनुभव था।

: १७ :

अमरनाथ का धार्मिक महत्त्व

हमारा देश धर्म-परायण देश है। यहां की मिट्टी का कण-कण धार्मिक दृष्टि से पावन माना जाता है। भारत के छत्तीस करोड निवासी विभिन्न रूपो मे अपने विश्वासो और धर्मो के अनुसार विभिन्न देवी-देवताओ तथा ईश्वर की पूजा करते है। धर्म यहा के लोकजीवन का सम्बल है। अमरनाथ के दर्शन के लिए सहस्रों बड़े-बूढ़े, कमजोर स्त्री-पुरुषों तक को खीच ले जाने वाली प्रेरक शक्ति भी उनकी धार्मिकता है। सैकड़ों-हजारों मील से लोग अनेक प्रकार की असुविधाओ और परेशानियों का सामना करके वहां पहुचते है और अमरनाथ की धर्म-कथा को सुनकर गद्गद् हो जाते है। जबतक भारत का लोकजीवन सुरक्षित है, धर्म के प्रति यह निष्ठा बराबर बनी रहेगी।

यहां अमरनाथ की पौराणिक कहानी देना अप्रासगिक न होगा। यह कहानी बडी रोचक है। इसमे न केवल शिव की महिमा बताई गई है, अपितु यात्रा किस प्रकार करनी चाहिए, रास्ते मे कौन-कौन से पूजनीय स्थान पडते है, कथा सुनने का फल क्या है, आदि-आदि अनेक बाते बताई गई है।

कहते है, एक बार नारद मुनि कैलास पर्वत पर महादेव के पास गये। महादेव उस समय वन-विहार करने गये थे। पार्वती थी। उन्होने नारद को प्रणाम करके आदरपूर्वक आसन पर बिठाया और आने का कारण पूछा। नारद ने कहा, "हे पार्वती, मेरे मन मे एक प्रश्न उठा है, जिसका उत्तर मै आपसे चाहता हू। कृपा कर यह बतावे कि महादेव सब देवो से बड़े है। उनके गले मे रुण्डमाला क्यो है?"

पार्वती इसका उत्तर न दे सकी तो नारद ने कहा, "महादेव से पूछिये।" इतना कहकर नारद अंतर्धान हो गये।

जब महादेव आये तो पार्वती ने नारद का प्रश्न पूछा। महादेव ने कहा, "यह प्रश्न मत पूछो।" लेकिन जब पार्वती का आग्रह हुआ तो उन्होंने बताया कि मेरे गले मे जितने मुण्ड है, वे सब तुम्हारे ही सिर है। तुमने जितने शरीर धारण किये है उतने ही मुण्ड हमने धारण किये है।

इसपर पार्वती ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "इसका मतलब यह हुआ कि मैं मरती हू और आप अमर है ?"

महादेव ने कहा, "तुम ठीक कहती हो। मैं अमर हू और ऐसा अमरनाथ के कारण हुआ है।"

पार्वती ने कहा, "तो वह कथा मुझे भी सुना दीजिये।"

महादेव ने इस गुफा मे आसन लगाया और कालाग्नि रुद्र नामक एक गण को बुलाकर चारो ओर अग्नि प्रज्वलित कराई, जिससे पार्वती के अतिरिक्त और कोई भी उस कथा को न सुन पावे। दैवयोग से महादेव के आसन के नीचे एक तोते का अण्डा था, जिस पर गण की दृष्टि नही गई। महादेव एकाग्रचित्त से अमरकथा सुनाने लगे और पार्वती सुनने लगी। कथा सुनते ही अडे मे जीवन पैदा हो गया। उधर पार्वती कथा सुनते-सुनते सो गई तो अडे मे से तोता उनके स्थान पर हुकारा देता रहा। अमरकथा समाप्त होने पर महादेव ने पूछा, "तुमने कथा सुनी ?" पार्वती ने उत्तर दिया, "नही, मै तो सो गई थी।" तब महादेव ने विस्मय से चारो ओर देखा कि यह हुकारा कौन दे रहा था। तोता यह देखकर घबडा कर उडा। महादेव ने पीछा किया। तोते को त्रिलोक मे कही भी स्थान नही मिला। भगवान व्यास की स्त्री अपने द्वार पर बैठी थी। उन्होंने जमुहाई लेने के लिए मुंह खोला तो तोता उनके मुंह मे होकर पेट मे चला गया। महादेव ने व्यास से कहा कि हमारा चोर आपके यहा है। व्यास को कुछ पता न था। उन्होंने स्त्री से पूछा तो उसने बता दिया कि कोई पक्षी पेट मे चला गया है। स्त्री को मारना पाप होता है। महादेव लौट आये।

कुछ समय वाद जव व्यास की स्त्री के पेट मे वहुत पीडा होने लगी तो व्यास व्रह्मा के पास गये और उन्हे साथ लेकर विष्णुजी के पास आये। अनतर तीनो मिलकर महादेव के पास पहुचे। चारो ने पक्षी की स्तुति की। अमरकथा के प्रभाव से वह पक्षी चारो वेद, अठारह पुराग आदि-आदि से पूर्ण ज्ञानी हो गया था। चारो की स्तुति सुन कर वह वोला, "जवतक यह जगत निर्मोही न होगा तवतक मै वाहर नही आऊगा।" विष्णु ने अपनी माया से जगत को निर्मोही वना दिया। पक्षी वालक के रूप मे वाहर आया। उसका नाम शुकदेव हुआ।

उसी समय विष्णु ने अपनी माया समेट ली। जगत फिर मोही वन गया। व्यास व्याकुल होकर अपने पुत्र के पीछे दौडे। शुकदेव ने कहा, "इस दुनिया मे न कोई किसी का पुत्र है, न पिता।" व्यास ने कहा, "अव ऐसा नही है।"

शुकदेव ने ध्यान लगाकर देखा तो पता चला कि विष्णु ने उनके साथ छल किया है। उन्होने दुखी होकर कहा, "मै जवतक गुरु नही कर लूगा, घर नही लौटूगा।"

शुकदेव सव जगह घूमे, पर कोई भी उनसे वडा न मिला। तव पिता के सुझाव पर वह राजा जनक के पास गये। राजा जनक के पास उनकी स्त्री और उनके राजपाट को देखकर उन्हे ग्लानि हुई, लेकिन राजा जनक की माया से उसी समय सारा नगर अग्नि मे भस्म हो गया। महल भी भस्म होने लगा। इतने पर भी राजा जनक और उनकी स्त्री का मन विचलित न हुआ। शुकदेव का चित व्याकुल होने लगा। उन्हे अमरकथा के सुनने और अमर होने का अभिमान था। राजा जनक ने कहा, "हमारा शरीर नश्वर है, जलेगा। पर तुम क्यो घवराते हो? तुम तो अमर हो।"

शुकदेव और भी व्याकुल हुए। राजा जनक ने उनकी व्यथा को देखकर अग्नि शात कर दी। शुकदेव ने उन्हे अपना गुरु वनाकर उपदेश ग्रहण किया।

इसके पश्चात शुकदेव मुनि नैमिषारण्य गये। वहा उनका बडा आदर हुआ। ऋषि-मुनियो ने एकत्र होकर उनसे अमर कथा सुनाने की प्रार्थना की। शुकदेव ने उनकी प्रार्थना मानकर कथा कहना आरभ किया। ज्योही कथारभ हुआ कि कैलास, क्षीर-सागर और ब्रह्मलोक हिलने लगे। ब्रह्मा, विष्णु, महादेव दौडे आये। महादेव को भय हुआ कि सारे लोग अमरकथा सुन लेगे तो सृष्टि का सचालन रुक जायगा। इसलिए क्रुद्ध होकर उन्होने शाप दिया कि जो अमरकथा को सुनेगा, वह अमर नही होगा, लेकिन शिवलोक को अवश्य प्राप्त होगा।

पार्वती ने महादेव से कहा, "हे स्वामिन, मै अमरनाथ-यात्रा का महत्व सुनना चाहती हू। कृपाकर आप उसकी महिमा का वर्णन करे, यात्रा का मार्ग बतावे और यह भी कहे कि अमरनाथ का दर्शन करने वाला किस गति को प्राप्त होता है।"

महादेव ने उत्तर दिया—हे देवि, यात्रा दो प्रकार की होती है। एक ऊपर की, दूसरी नीचे की। ऊपर की यात्रा मोक्ष चाहने वाले योगियो को प्राणायाम से होती है। नीचे की यात्रा पादा-चार से। ये दोनो प्रकार की यात्राए धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अभिलाषी पुरुषो को करनी चाहिए। इनसे पाप क्षय होकर चित्त शुद्ध होता है और व्यक्ति अमरकथा के सुनने का अधिकारी हो जाता है। यात्रा इस कथन के अनुसार शुरू हो। श्रीनगर मे गणेश की स्तुति कर षोडश (गुराहुयार) तीर्थ पर स्नान तथा आचमन करके शिवपुर (पामपुर) पहुचे, फिर सिद्धो के क्षेत्र पद्मपुर मे और वारीश (वारसु) मे रुद्रगानायक तीर्थ पर स्नान करके युवती, मिष्ठोद (मिठवन्य) तीर्थो मे होकर अवन्तीपुर जाय। वहा सिद्धो के क्षेत्र में स्नान कर महानाग जाकर हारीपारी गाव मे हरिद्राख्य गणपति मे होता हुआ वलिहार क्षेत्र पहुचे। वहा से हस्तिकर्ण (नागाश्रम) के समीप ज्येष्ठाषाढ नामक

गणस्वामी का पूजन करे। फिर चक्रनामक तीर्थ होता हुआ देवक तीर्थ(देवकायर) जाय। वहा से हरिश्चन्द्र तीर्थ के दर्शन कर लम्बोदरी नदी मे स्नान कर और थुजवारा ग्राम मे महादेव की गुफा को देखता हुआ सूर्य क्षेत्र (मटन) के सूर्य-कुण्ड मे स्नान कर (सूर्य मदिर मे)सूर्य भगवान के दर्शन करे। सूर्य-क्षेत्र अपने कर्मो से दुखी हुए पितरो के उद्धार के लिए उत्तम है।

इसके अनतर सत्कार (सोकरस), भद्राश्रम, हयशीर्ष (सिलगाम), अश्वतरक्षेत्र, सरलक(सलर)होता हुआ बालखिल्य आश्रम(ख्यिलन)जाय। कहते है कि इस अतिम तीर्थ मे बाल-खिल्यनामक ऋषियो ने कठोर तप किया था। उसने प्रसन्न होकर विष्णु भगवान से वर मागने को कहा। उनकी विनय पर विष्णु भगवान ने वहा गगा को प्रकट किया और यह वरदान भी दिया कि प्रलय तक बालखिल्य तीर्थ पवित्र रहेगा।

इसके बाद मामेश्वर (मानसेश्वर) जाय। कहते है, एक समय महादेव गणेश को दोनो ड्योढियो पर द्वारपाल बनाकर स्थलवाट चले गये। वहा थोडी देर ठहरकर खिल्यायन से ऊपर दडक मुनि के आश्रम मे जाकर विश्राम करने लगे। वहा देवता आये तो महादेव ने कहा—आगे मत बढो। ये शब्द सुनकर गणेश पाताल से आये और उन्होने भी यही शब्द कहे। उन्हे सुनते ही देव महादेव मे विलीन हो गये। अत यह ग्राम मामल नाम से प्रसिद्ध हुआ। महादेव ने गणेश से कहा अब तुम बहुत दिनों तक यही रहो और विघ्न-बाधाओं को दूर करो।

फिर मामलेश्वर के पास लम्बोदरी नदी मे स्नान करे। एक बार कैलास पर्वत पर महादेव पार्वती को कुछ बाते बता रहे थे। किसी को न आने देने के लिए गणेश को द्वारपाल बनाकर खडा कर दिया था। इतने मे इन्द्र त्रिपुरासुर से दु खी होकर देव-ताओ के साथ आये। गणेश ने रोका। दोनो मे युद्ध हुआ। इद्र हार गये। क्रोध करने से गणपति को भूख-प्यास लग आई। उन्होने

खूब फल खाये और गगाजल पिया। उनका पेट निकल आया तो महादेव उन्हे लम्बोदर कहने लगे। गगा सूख गई थी। महादेव ने डमरू से गणेश के पेट पर चोट की तो वह उनके उदर से निकलकर बहने लगी। तब से उसका नाम लम्बोदरी पड गया।

लम्बोदरी के बाद रजिवन जाय। यहा राम, लक्ष्मण और सीता आये थे और मदमत्त राक्षसो को देखकर उन्हे पसीना आ गया था। उनके पसीने की बूदे कुण्डो मे गिरने के कारण वे पवित्र हो गये। पत्थरो पर चढ कर राम ने दैत्यो का अपने बाणो से सहार किया। राक्षरो का रक्त गिरने से वह पहाड रग गया। राम के चरण-स्पर्श से पवित्र बना।

अनतर नील नगा मे स्नान कर स्थाणुआश्रम (चदनवाडी) की ओर प्रस्थान करे। एक बार महादेवजी का मुह खेल मे पार्वती के नेत्रो से लग गया, जिससे उनकी आखो के अजन का निशान मुह पर हो गया। महादेव ने उसे गगा मे धोया। उसके कारण गगा का जल नीलवर्ण हो गया और वह 'नील-गगा' कहलाई। यह नीलगगा पहलगाम से ६॥ मील चदनवाडी के रास्ते मे है। किसी समय मे कैलासवासी शिव दक्ष प्रजापति की पुत्री सती के वियोग मे हिमालय पर कठोर तपस्या करने लगे। महेश्वरी बहुत दिनो तक उनकी सेवा करती रही, लेकिन महादेव अपनी तपस्या मे लीन रहे। पार्वती चन्दन वाटिका मे थी। बहुत घबराईं। शिव चूकि वहा निश्चल रूप से विराजमान थे, इसलिए वह स्थान स्थाणु-आश्रम कहलाया।

इसके बाद सरस्वती नदी आती है, फिर पेषण पर्वत (पिस्सू-घाटी)। एक समय देवता और असुर महादेवका दर्शन करने आये। पहाड पर चढते समय उनमे होड लग गई कि देखे कौन पहले पहुंचता है। युद्ध होने लगा। असुर पराजित हुए। उन्ही की हड्डियो का ढेर पेषण पर्वत (पिस्सूघाटी) है।

पिस्सूघाटी के ऊपर शेषनाग (सिसिर नाग) तथा वायु-

वर्जन (वायुजन)जाय।(इसकी कथा अध्याय १० मे आ चुकी है।)

जब शेषनाग पर्वत पर इन्द्र ने राक्षसो को हैरान किया तो वे भाग कर हत्यारा तालाब मे छिप गये और देवताओ को त्रास देने लगे। एक बार महादेव और पार्वती वहा से गुजरे तो पार्वती ने देवताओ का कष्ट दूर करने को कहा। महादेव के शाप से तालाब सूख गया।

इसके पश्चात् पचतरगिणी (पचतरणी) के पाच प्रवाहो मे स्नान करे। पूर्वकाल मे एक बार शभु यहा ताण्डव कर रहे थे। उनके जटाजूट ढीले हो गये और उनमे से पचधारा वाली गगा (पचतरणी) प्रकट हो गई।

श्रावणी के दिन प्रात काल भैरो घाटी की यात्रा करते हुए उसकी चोटी डामरक पर पहुचे और डामेश्वर भैरव का दर्शन करे।

हे, पार्वती इसके बाद अमरावती नदी मे स्नान कर अमरनाथ का दर्शन करे।

यह कथा सुन कर पार्वती बोली, "हे स्वामी, अब मुझे यह बताइये कि महादेव गुफा मे स्थित होकर अमरेश कैसे कहलाये?"

महादेव ने कहा—जिस प्रकार सृष्टि की रचना हुई, उसी प्रकार देवताओ आदि की। दूसरो की भाति वे भी मृत्यु को प्राप्त होते थे। इसलिए वे महादेव के पास गये और उनसे प्रार्थना की कि उन्हे मृत्यु से छुटकारा दिलवा दे। महादेव ने उन्हे सात्वना देकर कहा कि मै आपकी मृत्यु के भय से रक्षा करूगा। महादेव ने इतना कहकर अपने सिर से चद्रमा की कला को उतार कर निचोडा और देवताओ से कहा कि यह आपके मृत्यु रोग की उत्तम औषधि है। हे पार्वती, चन्द्रकला के निचोडने से जो अमृत-धारा निकली वह अमरावती नदी है। जो अमृतबिन्दु महादेव के शरीर पर पडे वे धरती पर गिर कर सूख गये। वे भस्म के रूप मे गुफा मे है। वह रस कड़ा होकर लिंग रूप हो गया। उनके दर्शन से देवताओ

का मृत्यु-भय दूर हो गया। अब से मेरा अनादि लिंग-शरीर त्रिलोक मे अमरेश के नाम से प्रसिद्ध होगा। देवता लोग अमरेश्वर भगवान के लिग के दर्शन कर चले गये।

पार्वती ने पूछा, "हे देव, यह और बताइये कि कौन से शिवगण कबूतर हुए, क्यो हुए और कहा रहते है ?"

महादेव ने कहा—एक बार महादेव सध्या समय नृत्य कर रहे थे। उसी समय रुद्र-रूपी गण आपस मे ईर्ष्या से 'कुरु-कुरु' करने लगे। महादेव ने देखा तो उन्हे बडा क्रोध आया। उन्होने शाप दिया कि वे रुद्ररूपीगण दीर्घकाल तक कुरु-कुरु करते रहेंगे।

पार्वती ने पूछा, "अब कृपाकर इतना और बताइये कि यात्रा किस समय सबसे अधिक फलदायक होती है ?"

महादेव ने उत्तर दिया—हे पार्वती, यात्रा का सबसे अधिक पुण्य श्रावणी को मिलता है, क्योकि महादेव ने अपना स्वरूप रक्षा-पूर्णिमा को प्रकाशमान किया था। हे देवी, काशी मे लिग-दर्शन व पूजन से दस गुना, प्रयाग मे सौ गुना और नैमिषारण्य तथा कुरु से हजार गुना अधिक पुण्य देने वाला अमरनाथ का दर्शन और पूजन है।

: १८ :

देश-विदेश की दृष्टि में

अमरनाथ का आकर्षण चिरकाल से रहा है और अनेक महापुरुषो ने वहा की यात्रा की है। स्वामी विवेकानद की जीवनी में उनके अमरनाथ-दर्शन के विषय मे लिखा है, "तब वह महत्त्वपूर्ण कन्दरा पर पहुचे, जहा उन्हे शिव के सान्निध्य का अनुभव हो रहा था। भावुकता से उनका शरीर सिहर रहा था। कन्दरा इतनी बडी थी कि उसमे एक गिरजा समा सकता था और ऐसा प्रतीत होता था, मानो शिव अपने सिंहासन पर विराजमान

है। तब शिव के प्रति भक्तिभावो से प्रदीप्त मुख लिये, भस्म रमाये, अगोछा पहने उन्होने कन्दरा मे प्रवेश किया और घुटनो के बल झुक कर प्रणाम किया। उस समय के गाभीर्य और सहस्रो कण्ठो से मुखरित स्तुति-ध्वनि तथा हिम-लिग की पवित्रता ने स्वामीजी को मुग्ध कर दिया। वे मूर्च्छित-से हो गये। उनके मन मे एक गुप्त प्रकाश हुआ, जिसके विषय मे उन्होने कभी चर्चा नही की। केवल इतना बताया कि शिव ने स्वय दर्शन देकर उन्हे अमरनाथ का वर प्रदान किया है, अर्थात् स्वेच्छा के बिना उनकी मृत्यु नही होगी। क्या यह वही नही हुआ, जो उनके गुरुदेव ने कहा था कि जब वह (विवेकानद) यह जान जायगे कि वह कौन है और क्या है, तब वह अपना शरीर त्याग देगे ?"

बाद मे उन्होने अपनी एक यूरोपियन शिष्या से कहा, "लिग स्वय शिव थे। वहा भक्ति थी, केवल भक्ति। मैने आज तक कभी इतना सुन्दर और इतना प्रेरणादायक और कुछ नही देखा।"

स्वामी रामतीर्थ के सबध मे 'राम-वर्षा' पुस्तक मे लिखा है, "स्वामीजी यात्रा से लौटे तो उनके हृदय की शाति और पवित्रता की प्रसिद्धि सर्वत्र फैल गई।"

भारत के अतिरिक्त विदेशो के भी अनेक पर्यटक वहा आये है और अब भी आते रहते है। एक अमरीकन यात्री ने लिखा है, "लिग आश्चर्यजनक एव अद्भुत था। एक इतर हिन्दू को भी लिग के घटते-बढते रहने के कारण इस प्राकृतिक वास्तविकता के सृजनकर्त्ता के सम्मुख सिर झुकाना पडता है।"

एक पुर्तगाली महिला तो अमरनाथ के दर्शन कर इतनी अभिभूत हो गई कि उन्होने लिखा, "मेरा अनुमान है कि मै अपने जीवन मे फिर कभी अमरनाथ जैसे पवित्र, शातिमय और चिर-स्मरणीय स्थान को और कही नही देख सकूगी।"

एक अग्रेज यात्री का भी कथन सुन लीजिये, "वह विचार, जिसमे यात्री एकाग्र-चित्त होकर अपने सामान्य कामधधे से
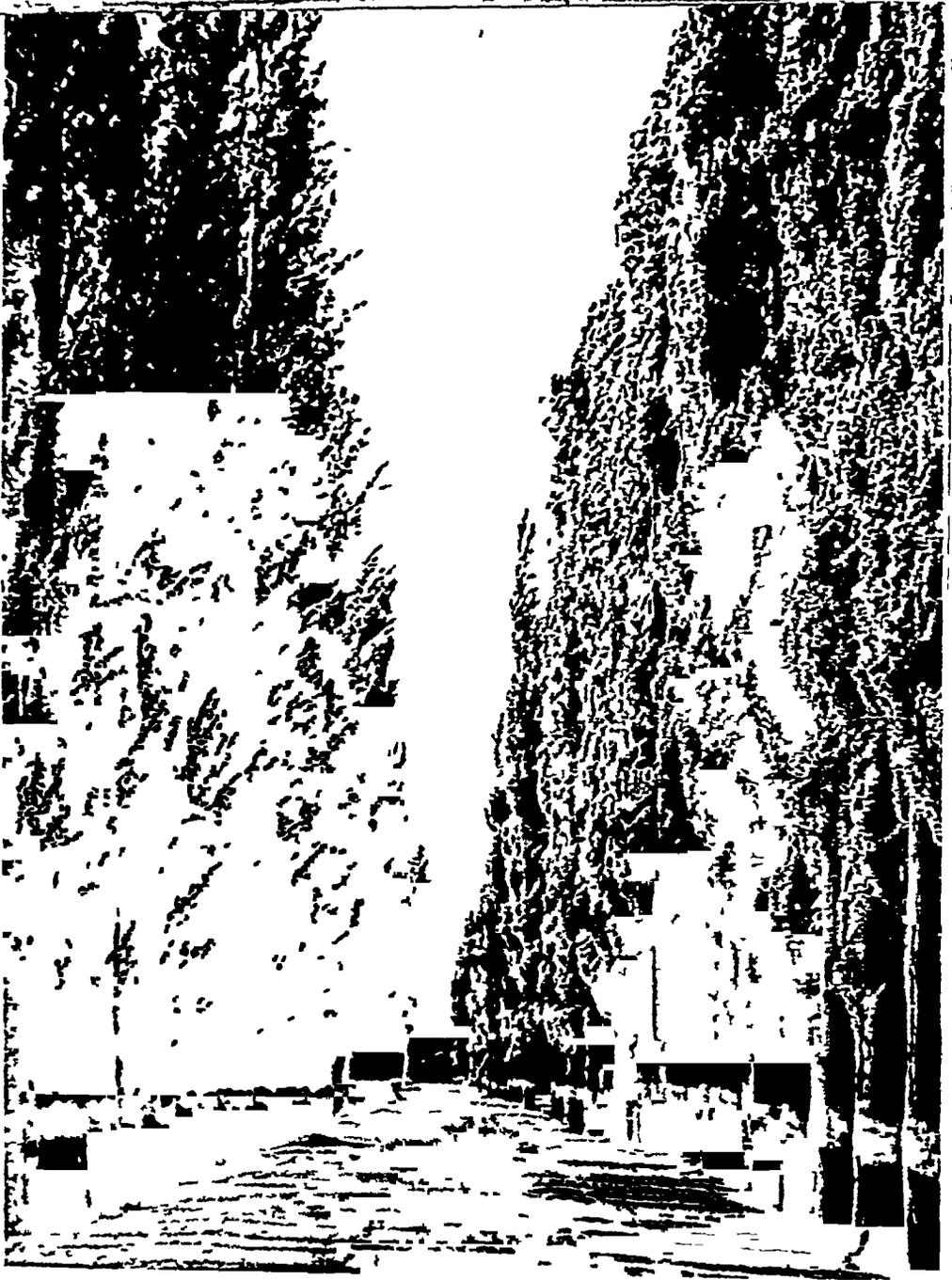
श्रीनगर के निकट का मनोहारी मार्ग
दोनो ओर वृक्षो की पक्तिया प्रहरी की भाति खडी है ।

बनिहाल की घाटी
ससार का सवसे
ऊचा रास्ता
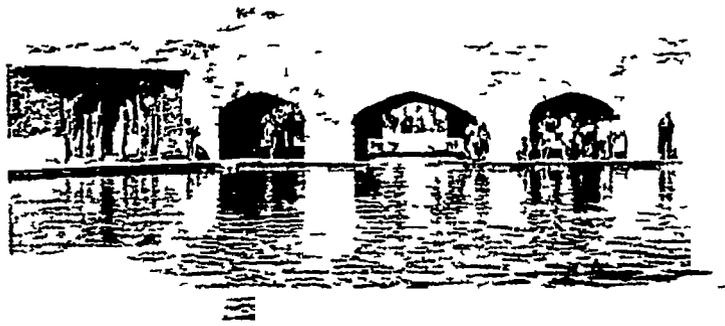
वेरीनाग
झेलम का
उद्गम

शकराचार्य
का मंदिर

श्रीनगर
का
प्रमुख
बाजार

मटन तीर्थ का एक दृश्य
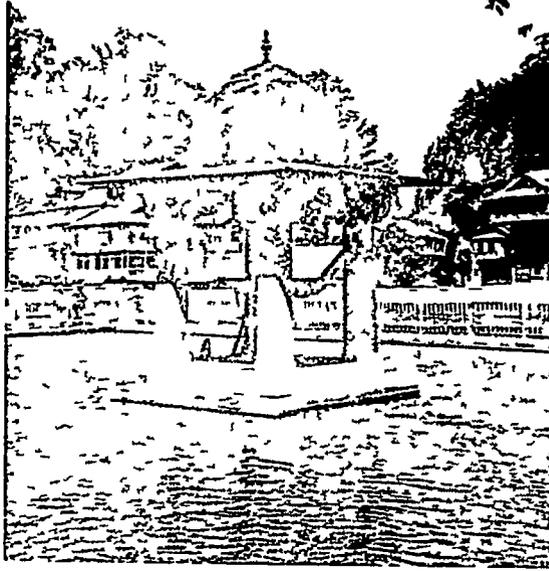
अवन्तीपुर के कलापूर्ण मदिर के अवशेष

पहलगाम के रास्ते में लिदर नदी का एक दृश्य
नदी ने इस भूभाग को अनुपम सौन्दर्य प्रदान किया है ।

कलकल निनाद करती सतत-प्रवाहिनी लिदर

शाली (धान) के खेत

पहलगाम का एक दृश्य
अग्रभाग मे लिदर की एक धारा

जोजपाल

वायुजन में हमारी सयुक्त टोली

शेषनाग की हिममंडित चोटिया—ब्रह्मा, विष्णु, महेश
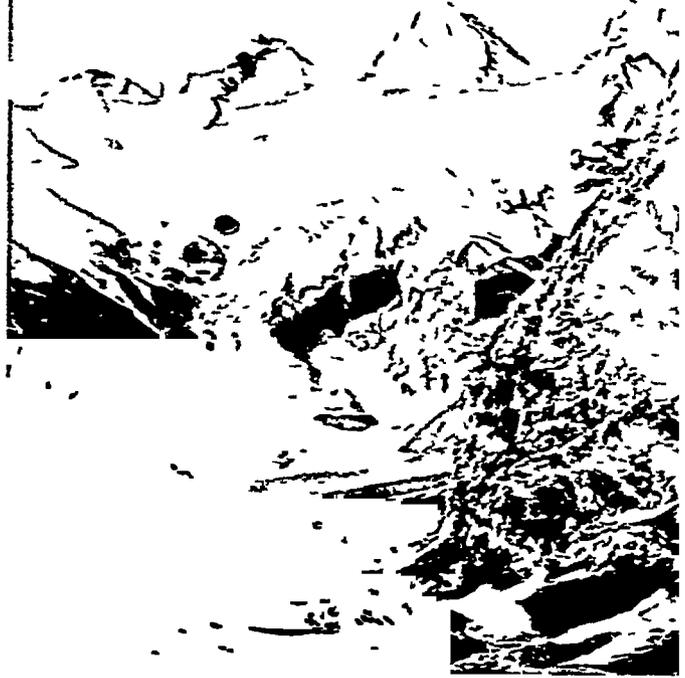
शेषनाग झील
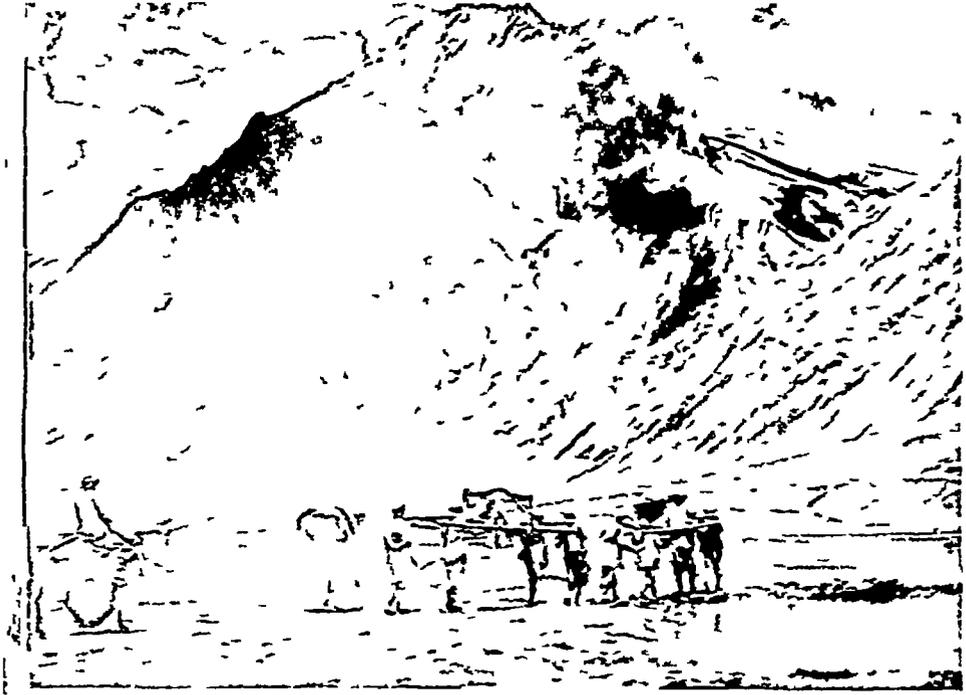
डाडी और टट्टू पर जाते हुए यात्री

अंतिम पडाव पंच-तरणी
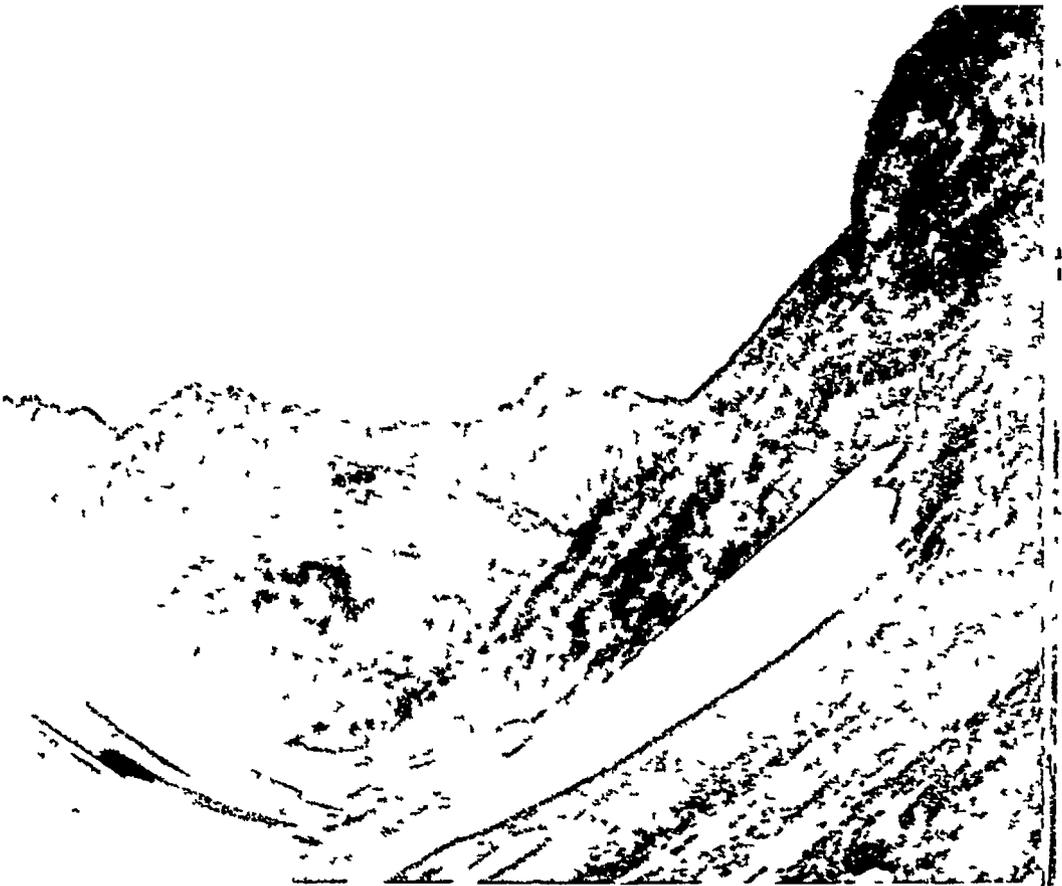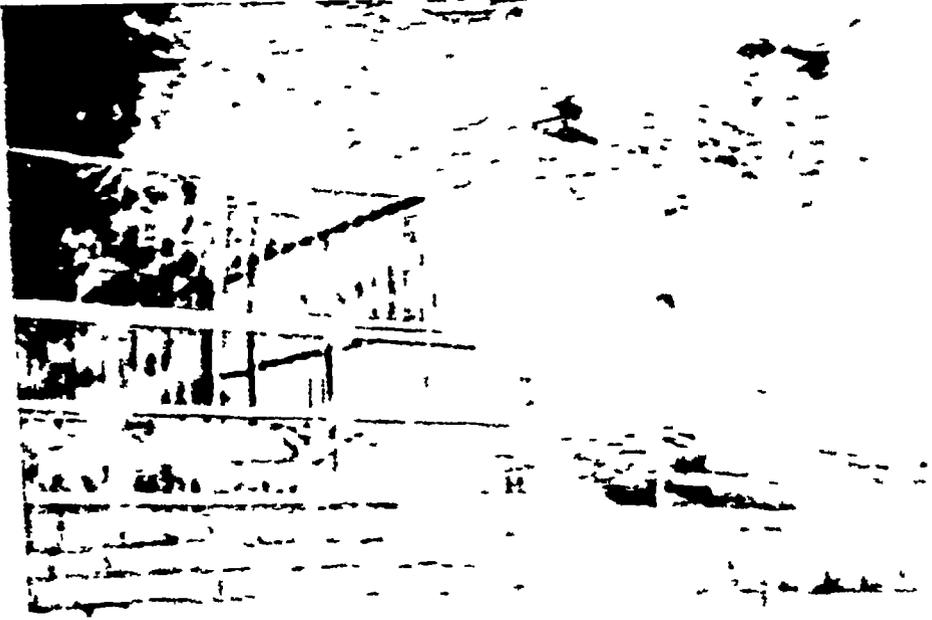
यात्रा से वापसी पर   पहलगाम में

पहलगाम गाधी-आश्रम के कार्यकर्त्ता
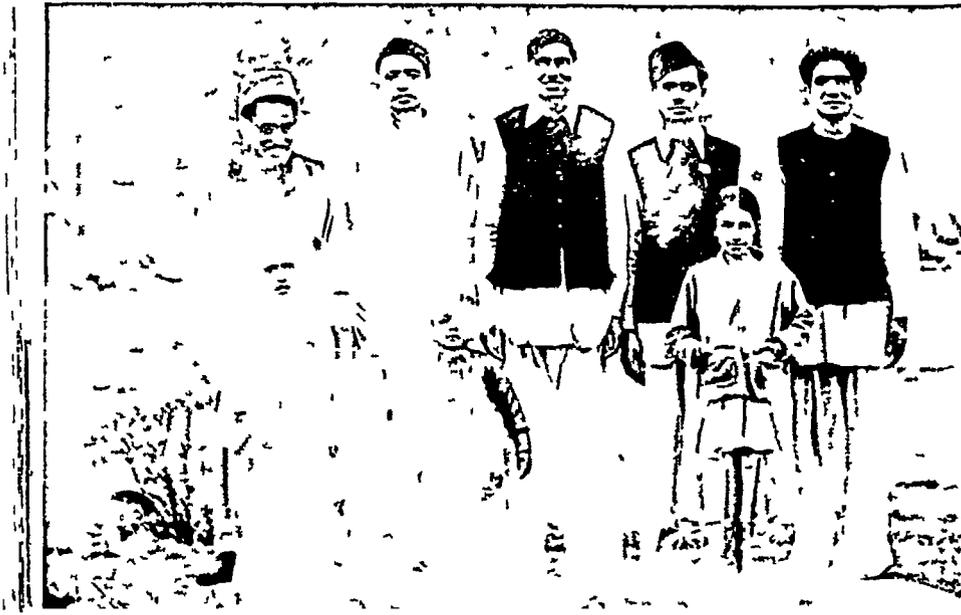
थोडा ही साथ रहा था , लेकिन इन लोगो की आत्मीयता ने हम लोगो के हृदयो को गद्गद् कर दिया। हमने सबके प्रेम के लिए आभार प्रकट किया, और यह आश्वासन देकर कि हम फिर आवेगे, वहा से रवाना हो गये। लिदर नदी और घाटी का सौदर्य बडा लुभावना प्रतीत हो रहा था और चिलकती धूप के कारण वह और भी आकर्षक जान पडता था , लेकिन समय की तंगी के कारण हमे उससे विदा लेनी पडी।

वहा से चल कर हम मटन पहुँचे । काशीनाथ पडा ने कहा था कि वह वहा मिलेगे , लेकिन नही मिले। मटन मे थोडी देर रुककर उसके प्रपात का जल पीकर आगे बढे।

पहलगाम से कुछ बसे सीधी श्रीनगर आती है, कुछ रास्ते मे इधर-उधर पडने वाले दर्शनीय स्थानो को दिखाती हुई आती है। उनमे सीधी आने वाली बसो की अपेक्षा किराया कुछ अधिक लगता है। हम लोगो का इरादा दर्शनीय स्थलो को देखते हुए लौटने का था, कारण कि इधर से हम लोग सीधी बस से गये थे और कई स्थान देखने से छूट गये थे।

मटन के बाद अनतनाग पहुचे। यह बहुत बडा नगर है। पहाडी की तलहटी मे बसा है। यहा अनेक झरने है। यहा का दर्शनीय झरना 'मलखनाग' है। यहां पर दो कुण्ड है। गधक का झरना है। अनतनाग से ६ मील पर अच्छाबल है, जिसका निर्माण शाहजहा ने किया था। यहा पर एक सुन्दर उद्यान है, जिसमे झरना बहता है। बीच मे एक बारहदरी है, जिसके इधर-उधर बहुत से फव्वारे उसके सौदर्य मे चार चाद लगाते है। यहां मत्स्य उद्योग अच्छी तरह से होता है। अच्छाबल से १० मील पर कुकरनाग है, जहां का जलवायु काश्मीर भर मे सर्वोत्तम माना जाता है।

ये स्थान देखने मे काफी समय लग गया। हमारी बस अब तेजी से श्रीनगर की ओर दौडी। रास्ते मे शाली (धान) के खेत

दूर-दूर तक फैले थे, जिनमे काश्मीरी पुरुष-स्त्रिया काम कर रहे थे। डूबते सूर्य के प्रकाश मे ये खेत बडे अच्छे लगते थे।

कृष्णाबहन के यहा पहुचे तबतक कुछ-कुछ अधेरा हो गया था। कृष्णाबहन बडी खुश हुई कि हम अमरनाथ की यात्रा कर आये और जब उन्होने सारा हाल सुना तो वह और भी प्रसन्न हुई कि यात्रा सानद सम्पन्न हुई।

अगला दिन हम लोगो ने श्रीनगर के बगीचे देखने मे बिताया। चश्माशाही, निशात; शालीमार सब देखे। बडे अच्छे लगे, लेकिन पानी की कमी के कारण उनमे विशेष रौनक नही थी। शालीमार के झरने और नहर तो एकदम सूखे पडे थे।

१८ तारीख को विट्ठलजी हवाई जहाज से दिल्ली रवाना हुए। हम लोगो का जी नही माना। निश्चय किया कि चार-पाच दिन श्रीनगर और रहेगे। विट्ठलजी को विदा करके बाजार मे घूमते रहे। अगले दिन गुलमर्ग जाने के लिए सीटे बुक कराई ।

१९ तारीख को सबेरे ९॥ बजे बस से रवाना होकर टगमर्ग पहुचे। श्रीनगर से यह स्थान लगभग २८ मील है। बस यहा तक आती है। आगे टट्टुओ पर जाते है। हम लोग ११॥ बजे वहा पहुचे और तत्काल टट्टू लेकर गुलमर्ग को रवाना हो गये। गुलमर्ग वहा से ३ मील है। ऊचाई लगभग १० हजार फुट । स्थान बडा सुन्दर है। प्राकृतिक दृश्य अद्‌भुत है। अग्रेजो के जमाने मे यहा बडी चहल-पहल रहती थी, अब तो उजडा-सा पडा था। इसका एक कारण यह भी था कि यात्रा का मौसम खत्म हो चुका था । गुलमर्ग के चारो ओर देवदार और चीड के घने वृक्ष है। मई से सितम्बर के शुरू तक यहा काफी भीड-भाड रहती है । यहा का मैदान बडा विशाल है। उसमे लोग पोलो खेलते है। गुलमर्ग से ढाई-तीन मील पर खिलनमर्ग है। वहा पर्वत के शिखर पर एक विस्तृत मैदान है। वहा से नगा पर्वत की हिमाच्छादित मालाए बडी भव्य लगती है। यह स्थान बिल्कुल खुला है। ठह-

रने के लिए कोई भी जगह नही है। ऊपर थोडी दूर पर अलपत्थर झील है, लेकिन समयाभाव के कारण हम लोग खिलनमर्ग से ही लौट आये। शाम को सात बजे श्रीनगर पहुचे।

अगले दिन काश्मीर के प्रधान मत्री श्री गुलाम मुहम्मद बख्शी ने बुलाया। काफी देर तक बातचीत होती रही। उन्होने बताया कि वह काश्मीर की चहुमुखी उन्नति के लिए कितने प्रयत्नशील है और वहा क्या-क्या काम हो रहे है।

२१ तारीख का सारा दिन सामान खरीदने मे गया। २२ को चलने का विचार था। इसलिए एक ही दिन अपने पास था। बाद मे बस के दफ्तर मे गये तो पता चला कि २३ तारीख से पहले सीट नही मिल सकती। २३ तारीख की पहली बस से सीटे रिजर्व कराई।

२२ तारीख का दिन काश्मीर एम्पोरियम देखने तथा इधर-उधर निरुद्देश्य घूमने मे बिताया। शाम को बख्शी साहब ने अपने यहा भोजन करने बुलाया। अ० भा० समाचार-पत्र-सम्पादक-सम्मेलन की स्थायी समिति के अधिवेशन मे आये हुए अनेक सम्पादक भी बुलाये गये थे। काश्मीरी सगीत का कार्यक्रम बडा अच्छा था। वही पर प्रथम बार काश्मीरी वाद्य देखे। रात को देर तक मनोरजन होता रहा।

२३ तारीख को बडे सवेरे तैयार होकर बस के अड्डे पर आये। कृष्णाबहन और रामसुमेरभाई की सास, माताजी, विदाई देने आई थी। सामान तुलवाया। बैठे-बैठे काफी समय बीत गया। कई बसे छूट गई, लेकिन हम लोगो की बारी नही आई। हम बार-बार पूछते थे, पर एक ही जवाब मिलता था कि अभी लीजिए। होते-होते एक घटा निकला, दो निकले, तब भी बारी न आई तो हम लोगो का धीरज छूटने लगा। एक भी बस शेष नही रही थी। तब मेनेजर ने एक ओर ले जाकर बताया कि हम लोगो ने रिजर्वेशन तो करा लिया था, लेकिन क्लर्क की गलती से आज के जाने

वाले यात्रियो के रजिस्टर मे हमारा नाम लिखने से रह गया। अत मे आश्वासन देते हुए उन्होने कहा, "गलती हमारी है। हम भुगतेगे और आपको सवारी देगे, आप फिक्र न करे।" फिर राह देखी। ज्यो-ज्यो समय आगे बढता जाता था, अनिश्चित अवस्था की हैरानी बढती जाती थी। जैसे-तैसे एक स्टेशन वैगन मिली। उससे रवाना हुए तो १०। बजे थे। मोटर मे हम लोगो के अतिरिक्त एक यात्री और था। देर जरूर हुई, पर गाडी आराम की मिल गई। वैसे लेते तो उनके लिए बहुत रुपये देने पड़ते।

श्रीनगर से निकलते ही बादल घिरने लगे और आगे चलकर बूदाबादी शुरू हो गई। हम सब लोग थोडी देर तक चर्चा करते रहे, फिर मौन हो गये। मेरा मन बार-बार दौडकर पीछे जाता था। कितना सुन्दर है यह देश। प्रकृति-रानी ने अपना सबकुछ यहा की भूमि और उस पर बसने वाले नर-नारियो पर न्यौछावर कर दिया है। यहा की नदियो, घाटियो, झरनो, पर्वतो, झीलो, बाग-बगीचो आदि ने इसे वह रूप प्रदान किया है, जो विश्व मे अनूठा है। ऐसा प्रतीत होता है कि सृष्टिकर्त्ता ने किसी बहुत ही उदात्त क्षण मे इस भूप्रदेश का निर्माण किया होगा। प्राकृतिक सौंदर्य की वह खान है। पर यह 'पर' क्या है, जो वहा की धवलता पर एक काला धब्बा लगा देती है ? वह है वहा की गरीबी और दैन्य, निरक्षरता और गदगी ! ..ऐसा क्यो है ? इसके अनेक कारण है। शायद सबसे बड़ा कारण यह है कि गंदगी और गरीबी के प्रति वहा के मानव की चेतना लुप्त हो गई है।

"मुश्किले इतनी पडी हमपर कि आसा हो गई ।'

विचार-धारा जाने कहा-कहा दौडती रही। मोटर तेजी से अपने रास्ते पर चली जा रही थी। ड्राइवर बडा रसिक था। बीच-बीच मे कुछ कह कर हम लोगो का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेता था।

काजीगुण्ड से वर्षा प्रारभ हो गई। हम लोगो को चिता हुई

कि कही रास्ता खराव न हो जाय, पर ड्राइवर बेफिक्र था। कहता था कि ड्राइवरी मेरा पुश्तैनी पेशा है और सब मौसमो मे गाडी चलाने का मेरा अभ्यास है।

काजीगुण्ड के आगे से जब चढाई शुरू हुई तो बारिश और तेज हो गई, पर ड्राइवर पर उसका कोई असर नही पडा। गाडी के शीशे उसने वद करा दिये और मस्ती के साथ गाड़ी चलाता रहा। वर्षा के कारण दृश्यो की शोभा और बढ गई। पानी से धुल कर वृक्ष खूब हरे-भरे दीखने लगे। ऐसा लगता था मानो हम लोग किसी स्वप्न-लोक मे यात्रा कर रहे हैं।

काश्मीर घाटी पार कर जव पीरपचाल पहुचे तो बादल वहुत ही घने हो गये थे। हम लोग सुरग के निकट मोटर से उतर पडे। ड्राइवर ने कहा कि देखिये, ऊपर से गिरने पर यहा क्या हाल हो सकता है। इतना कहकर उसने एक बडा-सा पत्थर नीचे लुढका दिया। हम लोगो के देखते-देखते वह चकनाचूर होकर नीचे पहुचा। ड्राइवर ने वताया कि तनिक-सी असावधानी पर यहा ऐसा हो जाता है।

सुरग से पार होकर हम लोग जम्मू घाटी मे आ गये। हम पहले ही वता चुके है कि पीरपचाल काश्मीर को दो भागो मे बाट देती है। एक ओर जम्मू घाटी है, दूसरी ओर काश्मीर घाटी। जम्मू घाटी का अपना महत्व है, पर जो सौदर्य काश्मीर घाटी मे है, वह इसमे नही।

वर्षा होने के कारण रास्ता इतना रपटीला हो गया था कि कई अवसरो पर गाडी रपटते-रपटते वची। ड्राइवर बडा कुशल था। उसने सभाल ली। रामवन, वटोत, कुद, सव वारिश मे पार किये। सर्दी खूव थी। कुद पर वरसते पानी मे चाय पी।

जम्मू पहुचे तवतक रात हो चुकी थी। वर्षा हो रही थी। यहा हमे यह गाडी छोड देनी थी। दूसरी से पठानकोट जाना था।

डाक वगले मे गाडी के रुकने पर हम लोगो ने स्थान की खोज

की। होटलो का चक्कर लगाया, लेकिन सब होटल भरे हुए थे । आखिर रघुनाथजी की धर्मशाला मे दो कमरे लेकर सामान रक्खा। कमरे क्या थे, घुडसाल समझिये। पानी पड रहा था। धर्मशाला मे टट्टियो की व्यवस्था नही थी। वडी परेशानी हुई, लेकिन आगे और जो मुसीवत आई, उसके सामने यह परेशानी गौण हो गई। वर्षा का वेग उत्तरोत्तर वढता गया और कमरो की छते जोरो से चूने लगी। यहा तक नौवत आई कि दोनो मे से किसी भी कमरे मे तिल भर स्थान विना पानी के न रहा। हम लोगो ने जब छते चूनी शुरू हुई तव कुछ स्थानो पर वर्तन रख-रख कर बचत करनी चाही, लेकिन कमरे का सारा फर्श जलमय होने लगा तो एक समस्या खडी हो गई। विस्तर समेट-समेट कर हम लोग कमरो की परिक्रमा कर चुके थे। अब विस्तर समेटे और उन पर बैठकर ऊपर छाते तान लिये। लेकिन उससे क्या बचाव होने वाला था ! सारी रात पानी पडता रहा और हम लोग उसका इसी प्रकार सामना करते रहे। एक ही सहारा था और वह यह कि सवेरे तो चल ही देना है।

बडी मुश्किल से रात कटी। एक क्षण को भी नीद नही आई। सवेरा हुआ। उठकर वस के अड्डे पर गया तो पता चला कि बारिश के कारण पठानकोट और श्रीनगर, दोनो ओर का रास्ता बद है। उस समय मन पर क्या बीती, पाठक सहज ही अनुमान नही कर सकते। सडक पर नहरे बह रही थी और कमरे झील बन गये थे। हे भगवान्, दिन कैसे कटेगा ? और कौन जाने कि वारिश कब बद होगी और रास्ता कब जाने योग्य होगा !

फिर होटलो मे चक्कर लगाना शुरू किया, पर कही जगह खाली नही थी। पजाबी धर्मशाला मे गये, वह भी भरी थी। क्या करे, कुछ सूझता नही था। आखिर शाम को पता चला कि एक होटल मे एक कमरा खाली है। हम लोगो को तो रात काटनी थी और क्या पता कि कितने दिन वहा रुकना पडे ! जल्दी-जल्दी

सामान उठवाया। सयोग की बात देखिये कि सामान उठवा कर वाहर लाये तो पानी वहुत धीमा हो गया और ज्योही होटल मे पहुचे कि फिर जोर से पडने लगा।

होटल मे सामान रखकर जान-मे-जान आई। रात भर के जगे थे, दिन भर के थके और हैरान थे, गरम पानी मगवा कर खूब नहाये।

सारी रात पानी पडता रहा। अब हम लोग अपेक्षाकृत आराम से थे, लेकिन चिता थी कि यही हाल रहा तो कई दिन जम्मू मे पडा रहना पडेगा।

रात को खूब सोये। सवेरे उठकर पता लगाया तो मालूम हुआ कि पठानकोट से गाडिया आने की सूचना मिली है। हम लोग उत्सुकता से उनके आने की राह देखने लगे।

८ वजे के करीव पहली गाडी आई। यात्रियो से मालूम हुआ कि रास्ता विल्कुल साफ तो नही है, पर गाडिया जा सकती है। वस अधिकारियो से पूछा तो उन्होने बतलाया कि वे गाडिया छोडने की व्यवस्था कर रहे है।

९-१० बजे के लगभग हमारी बस चली तब बूदावादी हो रही थी। रास्ता वास्तव मे कई स्थानो पर वहुत ही खराब हो गया था। पानी के वहाव ने सडक को जगह-जगह काट डाला था। वहुत-सी जगहो पर वहकर पत्थर इकट्ठे हो गये थे, जिससे रास्ता ऊवड-खावड हो गया था। दो-एक जगह तो ऐसा लगा कि हमारी वस फस जायगी।

राम-राम करते हुए दोपहर को १ वजे पठानकोट पहुचे। निकल आये यह क्या कम वात थी। वाद मे मालूम हुआ कि वारिश फिर जोरो से आई और लगभग एक सप्ताह तक रास्ता वद रहा। हम लोग भी उस दिन न निकल आये होते तो शायद एक सप्ताह तक जम्मू मे पडा रहना पडता। सामान प्लेटफार्म पर रखवा कर वेटिग रूम मे खूब अच्छी तरह से हाथ-मुह धोया और

होटल मे गरम-गरम ताजा भोजन किया।

शाम को ५॥ बजे की गाडी से रवाना होकर २६ तारीख की सुबह ६ बजे दिल्ली पहुच गये। इस प्रकार २३ दिन नदनकानन मे बिता कर मर्त्यलोक के प्राणी फिर मर्त्यलोक मे आ गये।

इस चिरस्मरणीय यात्रा को हुए कई महीने बीत चुके है, लेकिन रह-रह कर काश्मीर की याद आती है, वहा के सुन्दर दृश्य आखो के आगे घूमते है। अमरनाथ फिर जाने को जी करता है। पडित जवाहरलाल नेहरू के शब्दो मे आज भी "काश्मीर का स्वर्गीय जादूभरा नाद कानो मे गूज रहा है और उसकी याद दिल को सताती है। जो व्यक्ति उसके जादू मे फस गया है, वह उससे कैसे छुटकारा पा सकता है?"

●

परिशिष्ट

: १ :

आवश्यक सूचनाएं और सामान

अमरनाथ की यात्रा वास्तव मे बडी कठिन है और यात्रियो को यह सोच कर ही जाना चाहिए कि रास्ते मे उन्हे काफी मुसीबते उठानी पडेगी। इसलिए अगर किसी मे हिम्मत की कमी हो तो उसे जाने से पहले दस बार सोच लेना चाहिए।

दुर्बल या रोगी यात्रियो को पैदल जाने का खतरा नही उठाना चाहिए। वैसे बहुत से लोग पैदल जाते है और जो आनद पैदल चलने मे आता है, वह टट्टू पर अथवा डाडी मे आ ही नही सकता। फिर भी चढाइया और उतराइया इतनी अधिक है कि कमजोर या बीमार लोग रास्ते मे ही हिम्मत हार सकते है। इसलिए उन्हे अपनी स्थिति के अनुसार पहलगाम से डाडी कर लेनी चाहिए या टट्टू। रास्ते मे कुछ भी नही मिलता।

ठहरने की व्यवस्था चदनवाडी, वायुजन तथा पचतरणी मे है। ये सब स्थान एक-दूसरे से थोडे ही फासले पर है। यदि अपने साथ तम्बू न हो तो इन्ही स्थानो पर रात बिताना उचित होगा। रात को सर्दी इतनी अधिक होती है कि खुले मे ठहरना जान को खतरे मे डालना है। सर्दी के अतिरिक्त वहा कभी भी वर्षा हो सकती है। इसलिए ठहरने के सबध मे यात्रियो को पूरी सावधानी वरतनी चाहिए।

आने-जाने मे ५६ मील का सफर होता है। भूख खूब लगती है। यात्री प्राय अधिक खा जाते है। उसका परिणाम भी भुगतना पडता है। यात्रियो को चाहिए कि भूख से थोडा कम ही खाये।

अधिक बार खाना पडे, इसमे बुराई नही है, लेकिन ठूस-ठूस कर खाने से तबीयत के खराब हो जाने का पूरा अदेशा है। भोजन हल्का हो, यह भी जरूरी है।

निचाई की ओर बार-बार देखने या लगातार देखने मे चक्कर आ जाते है। जहा तक हो सके, यात्रियो को अपनी दृष्टि चारो ओर रखनी चाहिए।

इस यात्रा मे आदमी का सबसे उत्तम साथी टट्टू है। उसके ऊपर अपने को छोड दीजिये तो कोई खतरा नही है। टट्टू बहुत ही सधे हुए है और उन्हे दौडाया न जाय या उनके साथ उतावली न की जाय तो वे मजे मे यात्रा करा सकते है। लेकिन बहुत से यात्रियो को धीरज नही होता। वे जल्दी-से-जल्दी अमरनाथ पहुचना और लौट आना चाहते है। अपनी उतावली और अधीरता के कारण वे स्वय धोखा खाते है और टट्टू के प्राण भी सकट मे डालते है। यात्रा खूब मजे-मजे मे करनी चाहिए।

पहले पडाव चदनवाडी को छोडकर आगे खाने को कही कुछ भी नही मिलता। इसलिए भोजन की व्यवस्था पहलगाम से ही कर लेनी चाहिए।

सामान जितना अनिवार्य हो, उतना ही ले जाना उचित होगा। हमें एक सज्जन अपने साथ मेज-कुर्सिया, टी सेट, ट्रे, पलग, कमोड आदि ले जाते हुए मिले, मानो वे पूरा दीवानखाना और रसोईघर सजाने जा रहे हो। इस यात्रा के लिए ऐसी चीजे अनावश्यक है।

शौचादि के लिए वहा खुले मे जाना होता है। सर्दी के मारे यात्री दूर न जाकर पास ही बैठ जाते है। इससे गदगी होती है और बाद मे आने वाले यात्रियो को बडी हैरानी होती है। बीमारी का भी डर रहता है। जहा तक हो सके, निवृत्त होने के लिए दूर निकल जाना चाहिए। उससे टहलने का टहलना हो जायगा, गदगी भी नही होने पायगी।

आवश्यक सूचनाएं और सामान

जोजपाल से लेकर पचतरणी तक हवा कुछ ऐसी है कि प्राय यात्रियो को सास लेने मे कठिनाई होती है। उससे घबराना नही चाहिए। अच्छी नीद न आवे तो भी परेशान होने की जरूरत नही है। यात्रियो को टट्टू पर बैठने का अभ्यास न होने के कारण उन्हे थकान बहुत हो जाती है और इसलिए भी उन्हे नीद नही आती, या कम आती है। उसकी पूर्त्ति लौटकर पहलगाम मे हो जाती है।

यात्रा मे एक-दूसरे से आगे निकलने की होड बडी भयकर चीज है। रास्ता बेहद सकीर्ण और ढलवा है। जरा-सा धक्का लगा या पैर फिसला कि फिर पता नही चलता। वहा चलने मे जल्दबाजी या प्रतिद्वन्द्विता कदापि न होनी चाहिए।

जोजपाल तक तरह-तरह के पेड मिलते है। उन पर फल भी होते है। लेकिन बिना किसी जानकार से पूछे कभी कोई फल नही खाना चाहिए। न कोई फूल या जडी-बूटी सूघनी या चखनी चाहिए। इनमे कई विषैली होती है, जिनसे मृत्यु हो सकती है या मूर्च्छा आ सकती है।

यात्रा के लिए सबसे अच्छा समय मौसम की दृष्टि से श्रावण और भाद्रपद के बीच का होता है, लेकिन जब भी यात्रा की जाय, यह देख लिया जाय कि पानी पडने का अदेशा तो नही है। वर्षा और सर्दी, ये दोनो मौसम वहा के लिए अनुकूल नही है।

जितने सुमति और विनोदी स्वभाव के लोगो का साथ होगा, यात्रा उतनी ही आनद-प्रद होगी। सगी-साथी का चुनाव सावधानी से करना चाहिए। अश्रद्धालु, डरपोक और बात-बात पर मुह चढाने या आसू ढरकाने वाले साथी यात्रा का सारा आनद मिट्टी कर देते है।

रास्ते मे स्थान-स्थान पर झरने पडते है। उनमे बार-बार पानी पीना ठीक नही है। टट्टू वाले जानते है कि किन झरनो का पानी अच्छा है। इसलिए उनसे पूछकर या पहलगाम से पूरी

जानकारी लेकर पानी पीना चाहिए।

लौंग, इलायची, पिपरमेंट, अमृतधारा, लेमनचूस आदि जेब में रहने चाहिए। जी मिचलाने की शिकायत होने पर इनसे बडी सहायता मिलती है। सर्दी से बचाव के लिए थोडी-सी केसर का उपयोग भी लाभप्रद होता है। पेट हल्का रहे तो इनमे से किसी की भी जरूरत न पडे। आकस्मिक चोट के लिए टिंचर आयोडिन और मरकरी क्रोम भी साथ रखने चाहिए।

टट्टू वाले अपनी बचत के लिए दूसरे दिन ही लौटने का आग्रह करते है। तीन दिन से अधिक तो लगने ही नही देते। इस बारे में अपनी सामर्थ्य देख लेनी चाहिए और उनकी जल्दी को नही मानना चाहिए। यात्रा जितनी मजे-मजे में की जायगी उतना ही आनद आयगा।

यात्रियो की सुविधा और यात्रा की आवश्यक व्यवस्था के लिए पहलगाम मे विजिटर्स ब्यूरो है। टट्टू, डाडी आदि तय करने मे उसकी मदद ली जा सकती है, लेकिन ध्यान रहे कि ब्यूरो की मदद से टट्टू या डाडी सरकारी दर पर मिलते है, जो सामान्य दर से कुछ अधिक है। स्वतत्र व्यवस्था की जाय तो पहले तय कर लेना चाहिए, जिससे बाद मे झगडा न हो। दाम वहा बहुत बढा-चढाकर मागे जाते है, यह भी ध्यान रखना चाहिए।

चलने से पहले यात्रा का साहित्य पढ लेना चाहिए, जिससे सब चीजे अच्छी तरह से देखी जा सके और कुछ छूटे नही।

महिलाओ को साडी पहनकर टट्टू पर बैठने मे असुविधा होती है। इसलिए उन्हे सिलवार, पतलून या पाजामे की व्यवस्था रखनी चाहिए।

ओढने-बिछाने के कपडे अपनी आदत के अनुसार लिये जा सकते है, पर हमारा अनुमान है कि बिछाने के लिए एक गद्दा और ओढने के लिए एक रजाई या तीन-चार कम्बल होने ही चाहिए।

पहनने के लिए कुरता-कमीज या धोती-पाजामे का एक

अतिरिक्त सेट काफी होगा। पूरी बाह का एक स्वेटर, कोट, ओवरकोट, मफलर, सिर मे सर्दी लगती हो तो टोपा, गरम मोजे, दस्ताने, गरम पाजामा या पतलून और मजबूत जूते होने चाहिए। यदि कोई अमरनाथ पर स्नान करके कपडे न बदलना चाहे तो जो पहनकर जाय वही कपडे तीन दिन काम दे सकते है। जितना बोझ कम हो, अच्छा है।

पडावो पर ठहरने की व्यवस्था बहुत अच्छी नही है। छत की टीनो मे इतने छेद है कि अदर बैठ कर आसमान के तारे देखे जा सकते है। अत हो सके तो साथियो की सख्या के अनुसार एक-दो तम्बू पहलगाम से किराए पर लेकर चलना चाहिए।

भोजन की चीजो मे चावल, हरी सब्जिया, फल, घी, मसाले आदि ले लेने चाहिए। पकाने के बर्तन, एक अगीठी, कोयला, भी जरूरी है। बहुत से यात्री तीन दिन का खाना बनवा कर पहलगाम से साथ ले जाते है। यह ठीक नही है। बासी भोजन से सुस्ती आती है और कभी-कभी तबीयत भी बिगड जाती है।

चाय पीने की आदत हो तो चाय, चीनी और जमे दूध का एक डिब्बा साथ रख लेना चाहिए। सूखी मेवा—बादाम, किशमिश, अखरोट, काजू जरूर साथ होने चाहिए। टार्च, लालटेन, मिट्टी का तेल, मोमबत्ती, दियासलाई भी जरूरी है।

सर्दी और धूप के कारण चेहरे, विशेषकर नाक और माथे की चमडी उधड जाती है। उसके बचाव के लिए वैसलीन की एक शीशी रक्खे और रात को सोते समय मुह पर जरूर चुपड ले।

पैदल चलने मे सहारे के लिए पहलगाम मे लाठी मिलती है, जिसके नीचे लोहे की नुकीली कील रहती है। उससे चढाई पर बडी मदद मिलती है और फिसलन मे रुकावट होती है। प्रत्येक यात्री के लिए एक-एक लाठी अवश्य ले लेनी चाहिए। बरफ पर चलने मे तो वह बहुत ही काम आती है।

हर यात्री के लिए एक टट्टू सवारी का आवश्यक है।

सुमिरन के लिए जरूरत के हिसाब से कई यात्री मिल कर व्यवस्था कर सकते हैं। सरकारी दर से १७॥) मे सवारी का टट्टू मिलता है, १५)मे लद्दू। इसमे आना-जाना दोनो शामिल है। डाडी ८०-८५) मे होती है।

यदि सर्दी अधिक हो तो थोड़ी-सी ब्राडी भी साथ रक्खी जा सकती है।

इस दुर्लभ यात्रा की स्मृति को स्थायित्व देने के लिए एक अच्छा-सा कैमरा जरूर साथ होना चाहिए। पहलगाम से अमरनाथ तक आने-जाने मे सैकडो दृश्य ऐसे आते है,जिनके चित्रलेने चाहिए। फिल्मे जितनी अधिक हो, अच्छा है। हम लोगो के पास फिल्मे कम होने के कारण बहुत से सुन्दर दृश्य छूट गये। रास्ते मे फिल्मे मिलती नही। यात्रियो को चाहिए कि कम-से-कम एक दर्जन फिल्मे इस यात्रा के लिए साथ मे जरूर रक्खे।

: २ :

अमरनाथ : एक निगाह में

स्थान	फासला	ऊंचाई
१. श्रीनगर		५३०० फुट समुद्र तट से
२. अनतनाग	३४ मील	५२४० ,, ,, ,,
३ पहलगाम	२५ मील	७२०० ,, ,, ,,
४. चदनवाडी	८ मील	९५०० ,, ,, ,,
५. शेषनाग	७ मील	११,७३० ,, ,, ,,
६ वायुजन	१ मील	१३,००० ,, ,, ,,
७ महागुनस	३ मील	१४,७०० ,, ,, ,,
८ पंचतरणी	५ मील	१२,००० ,, ,, ,,
९ अमरनाथ	४ मील	१२,७२९ ,, ,, ,,

श्रीनगर से अमरनाथ ८७ मील

पहलगाम से अमरनाथ २८ मील

: ३ :

सूचना-केन्द्र

१. विजिटर्स ब्यूरो, जम्मू एण्ड काश्मीर गवर्नमेंट,
रेजीडेंसी रोड,
श्रीनगर

२. दी गवर्नमेंट ऑव इंडिया टूरिस्ट इन्फार्मेशन आफिस,
रेजीडेंसी रोड,
श्रीनगर

३. रीजनल टूरिस्ट आफीसर
टर्मीनस विक्टोरिया,
बंबई

४. रीजनल टूरिस्ट आफीसर
एस्प्लेनेड मेंशन,
१४-१६, गवर्नमेंट प्लेस,
कलकत्ता

५. रीजनल टूरिस्ट आफीसर,
८८, क्वीन्सवे,
नई दिल्ली

६. रीजनल टूरिस्ट आफीसर,
१८ए, माउंट रोड,
मद्रास

७. टूरिस्ट रिसेप्शन आफीसर,
गवर्नमेण्ट ऑव इंडिया, टूरिस्ट आफिस,
बंड, श्रीनगर

८. टूरिस्ट इन्फार्मेशन आफीसर,
माल रोड, आगरा

९. टूरिस्ट इंफार्मेशन आफीसर,
१५ बी, माल,
बनारस कंट

अमरनाथ-यात्रा-पथ

बारामुला
श्रीनगर
अवन्तीपुर
अनन्तनाग
अच्छाबल
कोकरनाग
वेरीनाग
बनिहाल घाटी
पहलगाम
अमरनाथ
नाशरी सुरंग
उधमपुर
चिनानी
बटोत
रामबन
माधोपुर
रावी का पुल
पठानकोट
पैदल